रसिकप्रिया

चिन्तामणि व्यास

पुस्तक के विषय में

'रसिकप्रिया' को हिन्दी साहित्य और भारतीय चित्रकला की विभिन्न शैलियों के माध्यम से एक साथ देखने का प्रथम मौलिक प्रयास इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है। चित्र पर अंकित प्रत्येक कवित्त, दोहे अथवा सवैये के अर्थों को लेखक ने चित्रों के आधार पर समीक्षात्मक दृष्टि से मूल्यांकन करने का प्रयास किया है।

तूलिका के माध्यम से रसिकप्रिया को और रसिकप्रिया के माध्यम से चित्रकला को नये आयाम मिले। यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि केशव साहित्य ने कलाकारों को नये मापदंड दिये और कला के माध्यम से साहित्य जीवंत हो कागज पर उतर आया। लेखक के इस प्रयास को हिन्दी भाषा में कला और साहित्य का सगम कही जाने वाली यह प्रथम पुस्तक आंकी जा सकती है। रसिक कवि केशव ने साहित्य के अतिरिक्त कला को जो अमूल्य देन दी है, यह पुस्तक उसका एक प्रमाण है।
इस पुस्तक के अतिरिक्त लेखक निकट भविष्य में 'बुन्देली कला' और भारतीय संस्कृति में पशु-पक्षियों का महत्व' पर कला संबंधी रचनाएँ प्रस्तुत करने में प्रयत्नशील है।

रसिकप्रिया

महाकवि केशव रचित
रसिकप्रिया की भारतीय लघुचित्रों को देन

चिन्तामणि व्यास

गीता पब्लिशर्स झांसी, उ. प्र.

रसिकप्रिया

प्रकाशक
पं. विश्वनाथ शर्मा
गीता पब्लिशर्स
झांसी

प्रथम सस्करण 1000 प्रतियां
1988
मूल्य 240/- रुपया

मुद्रक :
प्रिन्टोजिना, सी –158, ओखला इन्डस्ट्रीयल एरिया फेस 1, नई दिल्ली– 110020

श्रद्धेय मां को समर्पित

केशव जयन्ती-समारोह समिति

टीकमगढ़ (म० प्र०)

द्वारा अधिघोषित १९८८ का

केशव-पुरस्कार

श्री चिन्तामणि व्यास को

उनकी उत्कृष्ट साहित्यिक रचना 'रसिकप्रिया' (महाकवि केशव कृत)

पर ससम्मान भेंट किया गया।

एतदर्थ पुरस्कार-राशि सहित यह सम्मान-पत्र उन्हें प्रदत्त करते हुए समिति गौरवान्वित है और बुंदेली क्षेत्र की साहित्य-समृद्धि के उन्मेष में उनके योगदान की अनुशंसा करती है।

संयोजक   कार्याध्यक्ष

केशव-जयन्ती-समारोह समिति टीकमगढ़ (म० प्र०)

ओरछा धाम, चैत्र शुक्ल नवमी विक्रमाब्द २०४५

राष्ट्रपति
भारत गणतंत्र
PRESIDENT
REPUBLIC OF INDIA

मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई है कि श्री चिन्तामणि व्यास ने महाकवि केशव की अमर कृति "रसिक प्रिया" पर आधारित राधा कृष्ण की प्रणय लीला के विभिन्न शैलियों में निर्मित चित्रों की समीक्षात्मक व्याख्या कर उसे एक पुस्तक का स्वरूप दिया है। यह एक सराहनीय प्रयास है और साहित्य तथा कला के संगम का अभिनव प्रयोग है। आशा करता हूं कि सहृदय पाठकों के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

जैलसिंह
(ज़ैल सिंह)

नई दिल्ली,
5 जून, 1987

The RASIKAPRIYA of Keshavdasa apart from being a great literary work, well known to all scholars and lovers of Hindi literature, is also very important to scholars of Indian Miniature Painting. This text originating in Bundelkhand has been widely illustrated by painters of the all the major kalams of Indian Miniatures. In order to fully appreciate these Miniatures in relation to text, it is essential to understand not only the bare meaning of the text but its emotional qualities which led to its constant pictorialisation. This is what the present book by Shri Chintamani Vyas, Curator, Rashtrapati Bhavan, New Delhi, seeks to achieve and hence it is indispensable to the fullest understanding of the RASIKAPRIYA paintings in the various schools of Indian Miniature Art.

Karl. Khandalavala

Bombay,
27.2.1988

Karl J. Khandalavala

प्राक्कथन

महाकवि केशव द्वारा रचित **रसिकप्रिया** काव्य ग्रन्थ पर विविध शैलियों में अंकित लघुचित्र केवल सामन्तशाही साज-सज्जा का अंग ही नहीं वरन् एक जीवन-पद्धति विशेष का संकेत करते हैं। शब्द सौष्ठव, पदलालित्य, भाव माधुर्य, काव्य, श्रृंगार और रसपूर्ण साहित्य से समन्वित, रससिद्ध कवि केशव ने नायक-नायिका के अलकों से लेकर चरण तक श्रृंगार तथा अलंकाराभरणों का जैसा सुन्दर वर्णन किया है वह विलासिता की विशेषता रखने वाले इस युग के वैभव को भी विस्मय में डाले बिना नहीं रहता। केशव की लेखनी ने जिस वैभव, रस-विलास के विपुलतम (वर्णात्मक) साधनों से कान्त-कामिनी कविता का कुसुम कोमल कलेवर नख-शिख तक सजाया है, उससे रंगों और रेखाओं का एक समृद्ध चित्र संसार नेत्रों के सम्मुख घूमने लगता है। लगभग 375 वर्षों की यात्रा तय करने के पश्चात भी भावों की नवीनता, रंगों की चमक और रेखाओं की लयात्मकता को यथावत रखने वाले असंख्य भारतीय लघु चित्र न केवल अपने समय के धार्मिक विश्वासों, जीवन-प्रसंगों एवं समय विशेष की धड़कनों का ही आभास नहीं कराते वरन् उस काल की संस्कृति एवं स्थापत्य के विकसित रूप को भी मुखरित करते हैं। चित्रकारों ने रसिकप्रिया को इन चित्रों में परिणित कर एक प्रकार से जीवन और आत्मा का समन्वय कर दिया है।

रसिकप्रिया काव्य तथा **बारहमासा** पर आधारित चित्र प्रायः कृष्णलीला से सबंधित हैं। प्रिय मिलन को जाती नायिका की परमासक्ति का सुन्दर वर्णन और विविध स्थलों पर कृष्ण और राधा के नायक और नायिका के रूप को संरचनायुक्त दुलर्भ चित्रण ने आज के परिपेक्ष में इस कला वैभव को ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण बना दिया है। इन चित्रों में लय, गति, संतुलन संयोजन, कल्पना, एकता, समानुपात का विशेष महत्व है जिसके कारण ये चित्र मानव हृदय को चमत्कृत कर देते हैं। ये चित्र कला के सघन संदर्भों का निर्मल दर्पण होने के साथ-साथ कवि और काव्य के सुमधुर मिश्रण को प्रतिबिम्बित करते हैं। केशव के इस काव्य में मुगल, राजस्थानी और पहाड़ी राजाओं ने कितने आनन्द का अनुभव किया – उसके प्रत्यक्षदर्शी प्रमाण हैं यह लघुचित्र जो विश्व भर के संग्रहालयों में बिखरे हुए हैं। इन चित्रों के ऐतिहासिक एवं काव्यात्मक तथ्य स्पष्ट रूप से तत्कालीन राजाओं की अभिरुचि का परिचय देते हैं। चित्रकारों को प्रश्रय देकर राजघरानों ने इस महाकवि की रचना को अमर कर बुन्देली संस्कृति को विश्व के मंच पर प्रतिष्ठित कर दिया।

इस विषय-चयन के लिए परामर्श हेतु जब मैंने नई दिल्ली स्थित राष्ट्रीय संग्रहालय के चित्रकला विभाग की संग्रहाध्यक्षा डॉ. दलजीत से चर्चा की तो मेरे अंतर के स्वर को समझ कर आत्मीयतासंमृत इस विदुषी ने महाकवि केशव रचित काव्य **रसिकप्रिया** और **'बारहमासा'** पर आधारित विविध शैलियों में चित्रित चित्रों के समीक्षात्मक शोध करने में यदि अपना अमूल्य योगदान न दिया होता तो इस पुस्तक की रचना असंभव सी थी। केशव रचित काव्य के चित्रांकन की व्याख्या करने का पं. केशव प्रसाद रावत जैसे

भ्रातास्वरूप आदर्श स्नेही से भी मेरी जिज्ञासा को पोषण मिला। पुस्तक की रचना के समय विशेष सहयोग के लिए मैं अपनी भार्या रामेश्वरी व्यास का भी ऋणी हूँ। इसी संदर्भ में नई दिल्ली स्थित राष्ट्रीय संग्रहालय के महा-निदेशक पद्मभूषण डॉ. लक्ष्मीप्रसाद सिहारे की सहायता के लिए कृतज्ञ हूँ। राजस्थान पुरातत्व और संग्रहालय विभाग के निदेशक का अनुग्रही हूं जिनके सहयोग से उदयपुर संग्रहालय के चित्रों का अध्ययन कर सका। इसी प्रकार इलाहाबाद संग्रहालय, उत्तर प्रदेश द्वारा दिये सहयोग का भी आभारी हूँ। उत्तम छाया चित्रण के लिए राष्ट्रीय संग्रहालय के श्री नेयमतउल्ला शाह और उन के सहयोगियों की जितनी प्रशंसा की जाए, थोड़ी है। वहां की पुस्कालयाध्यक्षा श्रीमती प्रतिभा पाराशर तथा भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के स्टेनोग्राफर श्री रामनिवास गुप्ता का भी आभारी हूं जिन्होंने यथासमय अपना योगदान दिया। श्री नरेन्द्र श्रीवास्तव को कला हेतु तथा श्री संजीव चोपड़ा को मुद्रण हेतु अथक परिश्रम के लिये धन्यवादी हूँ। पं. विश्वनाथ शर्मा का हृदय से कृतज्ञ हूं जिनके स्नेह और प्रेरणा से यह पुस्तक प्रकाश। में आई।

अंत में भूतपूर्व राष्ट्रपति महामहिम ज्ञानी जैल सिंह का अति अभारी हूँ जिनके प्रोत्साहन एवं आशीर्वाद से अपने अध्ययन को नई दिशा दे सका। मैं उन अनाम कलाकारों का भी ऋणी हूँ जिनके चित्रों के माध्यम से **रसिकप्रिया** को कला एवं साहित्य के मर्मज्ञ और पिपासु-जनों के लिए पुस्तक रूप में प्रस्तुत कर सका।

नई दिल्ली
राम नवमी, 26 मार्च 1988

चिन्तामणि व्यास

अनुक्रमणिका

महाकवि केशव और ओरछा नरेश इन्द्रजित्
मालवा, लगभग 1634 ई.

तूलिका से रचित रसिकप्रिया

बुन्देली साहित्य और संस्कृति ने देश के निर्माण हेतु अत्याधिक योगदान दिया है। बुन्देली धरा के सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश में धर्म के साथ साथ कला के महत्वपूर्ण सामंजस्य से इस भूखण्ड के कवियों ने साहित्य को जो अनुपम देन दी है, उसके बिना हिन्दी साहित्य आज भी अधूरा कहा जा सकता है। इसी बुन्देली धरा पर बिहारी, मतिराम, पद्माकर और रससिद्ध कवि केशव ने सरस्वती का अपार भंडार भरा है। विचारक होने के साथ-साथ कविगण अत्याधिक प्रभावशाली और प्रतापी होते हैं क्योंकि कवित्व की शक्ति उन्हें ऐसी क्षमता प्रदान करती है कि वे जन-साधारण के अधिक निकट न रहते हुए भी सच्चे जननायक बन जाते हैं। यही कारण है कि साहित्य में ही नहीं, ऐतिहासिक दृष्टि से भी मानव समाज में कवियों को ऊँचा स्थान मिला है। परिस्थितियों के रोचक निरुपण द्वारा और अपनी प्रतिभा तथा कल्पना के बल से जन-साधारण का मार्गदर्शन कर कविगण आदिकाल से तत्वदर्शी और युग-प्रर्वतक समझे जाते रहे हैं। ऐसे युग-प्रवर्तकों और तत्वदर्शियों में ही रससिद्ध कवि केशव की गणना की जाती है। बुन्देलखंड जिन परम्पराओं और सद्विचारों तथा उन पर आश्रित संस्कृति पर गर्व करता है, महाकवि केशव का जीवन और उनकी मधुर वाणी उसी परम्परा का अविभाज्य अंग है। जिस भू-भाग पर महाकवि केशव प्रतिष्ठित हो चमक रहे थे वही ब्रजी का आरंभिक भूभाग था और भाषा काव्य-निर्माण का स्रोत यहीं से फूटा। वे बुन्देली के कवि थे।

आचार्य केशव का जन्म ओरछा के एक सनाढ्य ब्राह्मण काशीनाथ मिश्र के घर सम्वत् 1618 (ई. 1555) में हुआ था, परन्तु उनकी इस जन्मतिथि पर कई विद्वान् सहमत नहीं। इनके बड़े भाई बलभद्र भी हिन्दी के अच्छे कवि थे तथा इनके पिता और पितामह दोनों का सरस्वती की उपासना के प्रभाव से राज दरबार में पूर्ण सम्मान होता था। उसी समान आचार्य केशव भी ओरछा नरेश रामसिंह के नवरत्न थे। जिनके छोटे भाई इन्द्रजित् ने कवीन्द्र केशव को अपना गुरू मानकर गुरुदक्षिणा में 22 गांव भेंट स्वरूप दिये थे। वे गुरू केशव का मंत्री तथा मित्र जैसा आदर करते थे। केशव विद्वान्, गंभीर एवं वाक्पटु थे। वे बड़े रसिक भी थे और यह रसिकता उनकी वृद्धावस्था तक बनी रही। इनकी तुलना सूर और तुलसी से सहज ही की जा सकती है

सूर.सूर तुलसी ससी, उड्गन केशवदास।
अब के कवि खद्योत सम, जहं तहं करत प्रकास ॥

रीतिकाल में कवीन्द्र केशव और बिहारी की काव्य प्रवाह में जैसी प्रतिष्ठा थी वैसी भक्तिकाल में जायसी और कबीर की भी नहीं थी। यद्यपि रहीम उस काल की सामाजिक तथा साहित्यिक प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि कवि थे फिर भी आचार्य केशव की गणना अति सौभाग्यशाली कवियों में की जा सकती है जो.राजदरबारों में, यहाँ तक कि मुगल सम्राट अकबर के दरबार तक में सदा सम्मान की दृष्टि से देखे गए। जिस प्रकार का आदर और सम्मान राजा इन्द्रजित् ने महाकवि केशव को दिया वैसा सौभाग्य

तो चन्दबरदायी और महाकवि भूषण को महाराजा पृथ्वीराज अथवा छत्रपति शिवाजी से भी प्राप्त नहीं हुआ।

गीत गोविन्द में श्रीकृष्ण को नायक और श्रीराधिकाजू को नायिका संबोधित कर जयदेव अभिनव कवि कहलाए। श्रीकृष्ण के सौंदर्योपासक दूसरे कोकिल कवि विद्यापति भी मैथिली भाषा में मानव सौन्दर्य चित्रण, नायिका भेद एवं रसनिरुपण में सिद्धहस्त कवि हुए हैं। इनकी अलंकार प्रियता और संयोग श्रृंगार खूब उभरा है। राधा के सौन्दर्य चित्रण में कवि की तल्लीनता दर्शनीय है। रीतिकाल के कवियों की व्यापक प्रवृत्ति रीति निरुपण की रही जिसमें वासना की गन्ध न होकर हृदय अतृप्त पुकार है। महाकवि सूरदास ने भी सूरसागर में श्रीकृष्ण की बाल-लीलाओं का बृजभाषा में जिस उच्चकोटि का वर्णन किया है, अन्य कवि उस स्तर तक श्रीकृष्ण का वर्णन करने में असमर्थ रहे हैं। उनका समस्त काव्य गेय पदों में है जिसमें वात्सल्य और श्रृंगार रस प्रधान है। किन्तु आचार्य केशव इन सबसे भिन्न राधा और श्रीकृष्ण के अलौकिक प्रेम को अपने काव्य में जिस प्रतिष्ठा पर पहुंचाने में सफल हुए हैं, वह हिन्दी साहित्य और भारतीय चित्रकला को एक अद्वितीय भेंट है। राधा कृष्ण के सूक्ष्म से सूक्ष्म आंतरिक मनोभावों को जिस कुशलता से केशव ने अपने काव्य में पिरोया है, वह वन्दनीय है।

केशव की काव्य शैली मानस को विमोहित कर आनन्दातिरेक से आह्लादित कर देती है। प्राकृतिक सुषमा का सुरम्य वर्णन वातावरण में अलौकिकता, मनोभावों की विविधता, नारी की कमनीयता और उसका लावण्य युक्त वर्णन केशव के काव्य की प्रमुख विशेषताएं रहीं हैं। इन्होंने अनेक काव्य ग्रन्थ लिखे, उनमें से निम्नलिखित ही उपलब्ध हुए हैं। रसिकप्रिया, कविप्रिया, रामचन्द्रिका, रतन-बावनी, जहांगीर-जसचन्द्रिका, वीरसिंह देवचरित, विज्ञान गीता और नख-शिख वर्णन। कहीं-कहीं चन्दनमाला का उल्लेख भी मिलता है। जैसे समुद्र के जलस्तर में जरा-सी कमी आने से उसकी थाह का पता सहज नहीं चलता, ठीक उसी प्रकार केशव के गूढ काव्य का अर्थ लगाना भी सहज नहीं है। किस शब्द के कितने मोहक-अमोहक अर्थ इनके दोहों से निकलते हैं, समुद्र की तरंगे गिनने के समान हैं।

आचार्य केशव ने रत्नसेन की प्रशंसा में रतन-बावनी, वीरसिंह देवरचित और जहांगीर-जसचन्द्रिका में जिस प्रकार वीरसिंह देव के शौर्य का वर्णन किया है उसकी तुलना गुथी हुई पुष्पों की माला से की जा सकती है। यह रचनाएं उनके धुरन्धर आचार्यत्व का परिचय तो देती ही हैं, साथ-साथ यह भी प्रमाणित करती हैं कि सम्राट अकबर को बुन्देले वीर और ओजस्वी राजाओं से अंत तक संघर्ष करना पड़ा था। उसकी महत्वाकांक्षा अतृप्त ही रही। राम की प्रशंसा में रामचन्द्रिका रचकर आचार्य केशव महाकवि तुलसीदास के समानान्तर आंके जा सकते हैं। सन्तों की भक्ति में उन्होंने विद्यागीता की रचना कर उनको महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

इस युग को "श्रृंगारकाल" अथवा "कला-काल" की संज्ञा भी दी जाती है। यह काल समृद्धि और विलासिता का काल रहा है। इस युग में महाकवि केशव ने कविप्रिया

और रसिकप्रिया की रचना कर, अपने मनोरंजक कवित्त को माधुर्य के शिखर पर स्थापित कर दिया । कविप्रिया कवि शिक्षा का ग्रन्थ है । इसमें संस्कृत के अलंकार सम्प्रदाय वाले आचार्यों का अनुगमन है । इसमें विशेषालंकार के अतिरिक्त सामान्यालंकार के अंतर्गत काव्य की शोभा बढ़ाने वाली सभी सामग्री जुटा दी गयी है । इस काव्य में केशव ने काव्यशास्त्र पर सर्वांगीण विचार किया है । कवि ने विशेष रूप से इस काव्य में अपने जीवन और इन्द्रजित् की प्रिया और अपनी शिष्या प्रवीन राय के अनुराग पर प्रकाश डाला है । कविप्रिया के अंतर्गत नखशिख और बारहमासा आते हैं जो आगे चलकर प्रथक प्रचारित किए जाने लगे ।

प्रकृति के माध्यम से उपदेश देने की परम्परा प्राचीन काल से प्रचलित है क्योंकि प्राणी का जीवन ओर विकास केवल प्रकृति के सम्पर्क और सहचार से ही हुआ है, जिससे प्रकृति मानव की क्रीड़ा स्थली बनी रही । सम्भवतः इसी से प्रेरित हो केशव ने बारहमासा की रचना की होगी । कवि ने अपने अनुभव-कौशल द्वारा मानवीय भावों को प्रत्येक मास के अनुकूल आश्चर्य, कौतूहल, श्रद्धा, क्रोध तथा अनुराग आदि को प्रमुख रूप में नायिका के माध्यम से उसके प्रियतम के प्रति वर्णित किया है, जिसमें उनके पांडित्य प्रदर्शन में कुछ शेष नहीं है । वास्तव में बारहमासा लोक प्रवाह की देन है जिसमें उन्होंने रस अलंकार तथा छन्दशास्त्र की विवेचना की है । इसमें उन्होंने ग्रीष्म की प्रचण्डता से प्रारम्भ कर बसन्त की रमणीयता को पर्यावसित किया है । प्रकृति ओर मानव-हृदय का तादात्म जैसा बारहमासा में मिलता है, अन्यत्र कहीं भी उपलब्ध नहीं । दरबारी कवि होने के कारण कवि केशव ने राज विलास वर्णन का जो विशेष प्रयास किया है उसका एक पक्ष बारहमासा के रूप में उभरा जिसे चित्रकारों ने सामन्ती विलास-वैभव में ढ़ाल कर एक नया स्वरूप प्रदान कर प्रेमी-प्रेमिका की भावनाओं को उदीप्त किया । बारहमासा के इस महत्त्व को देख कर पुस्तक के अन्तिम पृष्ठों में चित्रों सहित इसका वर्णन किया गया है ।

रसिकप्रिया ग्रन्थ रास-निर्णय पर रचित है जिसका प्रणयन राजा इन्द्रजित् की आज्ञा से सम्वत् 1648 में कार्तिक शुक्ल सप्तमी, सोमवार से हुआ । रसिकप्रिया में सर्वप्रथम राजधानी ओरछा और राजवंश के वर्णन करने के साथ-साथ इस ग्रन्थ की रचना का कारण भी लिखा है ।

तिन कवि केशवदास सौं कीन्हों धर्म-सनेहु । सब दुख दै करियों कहयौ, रसिकप्रिया करि देहु ।

इसके नायक श्रीकृष्ण और नायिका राधाजी या प्रियाजू हैं । रसिकप्रिया में आचार्य केशव के सांगोपांग नायिका भेद वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रृंगार में किस प्रकार लोच उत्पन्न करना चाहिए । रसिकता में महाकवि केशव कहीं-कहीं इतने तन्मय हो गए हैं कि इन वर्णनों में उन्हें कोई सीमा या मर्यादा मान्य ही नहीं ।

इस ग्रन्थ में सोलह प्रभाव हैं । प्रथम अध्याय में सिद्धि विनायक की पूजा अर्चना करने के पश्चात् कृष्ण की प्रशस्त स्तुति करते ही केशव ने अपनी प्राकृतिक-सुषमा से घिरी जन्मस्थली ओरछा और आश्रयदाता, गुण ग्राही राजा इन्द्रजित् के प्रेमाभाव का उल्लेख

सर्जक और प्रेरणा
राय प्रवीन और कवीन्द्र केशव
मालवा, लगभग 1670 ई.

किया है। द्वितीय अध्याय में विविध प्रकार के नायकों का सविस्तार वर्णन है। तृतीय में नायिका को विविध श्रेणियों में विभक्त कर आयु, वर्ग, स्वभाव आदि के आधार पर नायिका भेद का विवरण प्राप्त होता है। वात्स्यायन रचित **कामसूत्र** के अष्ट नायिका भेद को आधारभूत मानकर केशव के पद्मिनि, चित्रणी, शंखिनि, आदि नायिकाओं का सुन्दर वर्णन किया है। चतुर्थ अध्याय में विभिन्न रूपों में नायक-नायिकाओं के मिलने की क्रिया जैसे चित्रदर्शन, स्वप्न दर्शन और साक्षात् मिलन आदि। पंचम अध्याय में आसक्त नवोढ़ा नायिका और नायक किन-किन प्रकारों से समय, स्थान और परिस्थिति में मिलने की युक्ति करते हैं, उनकी व्याख्या की गई है। "आत्मनस्तु कामाय सर्वप्रिया भवति" अर्थात आत्मा ही सर्वाधिक प्रेम विषय है और उसके लिए सब कुछ प्रिय होता है, इस औपनिषद रहस्य की व्याख्या ही इस अध्याय में हुई है। छठे अध्याय में भाव निरूपण जिसमें लीलाहाव, हेलाहाव, ललितहाव, मदहाव और विलास हाव इत्यादि का वर्णन किया गया है। सप्तम् अध्याय में विभिन्न प्रकार की नायिकाओं जैसे अभिसारिका, स्वकीया, स्वाधीनपत्तिका, अभिसधिंता आदि का निरूपण है। इसके अतिरिक्त मित्र-बंधु, ब्राह्मणी अथवा अतृप्त एवं उदास रमणी से कामकेलि करना वर्जित माना है।

बिछरतु प्रीतम प्रीतमा होत जु रस तिहि ठौर। बिप्रलम्भ सिंगार कहि, बरनत कवि सिरमौर ॥

विप्रलम्भ केशव के अनुसार चार प्रकार का होता है। पूर्वानुराग, मान, करूण एवं प्रवास, नायक-नायिका के परस्पर दर्शन होने पर अनुराग तो उत्पन्न हो जाता है किन्तु पुनः न मिलने पर पूर्वानुराग विप्रलम्भ होता है। इसी पूर्वानुराग के प्रसंग में महाकवि केशव ने अभिलाषा, चिन्ता, गुणकथन, स्मृति, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता एवं मरण — दस विरह दशाओं का उल्लेख किया है। अगले अध्याय में नायक की मानलीला का सुन्दर वर्णन है। दशम् अध्याय में नायक उपेक्षित नायिका को मनाने के प्रायः सभी उपाय करता है। एकादश अध्याय वियोग से संबंधित है। द्वादश में विभिन्न प्रकार की सखियों, विशेषकर मालिन, पटवन, नाईन आदि के महत्व का वर्णन किया गया है। तेरहवां अध्याय सखियों की विविध युक्तियों द्वारा नायक-नायिका के मिलन कराने से संबंधित है। चौदहवें और पन्द्रहवें अध्यायों में विविध रसों में नायक-नायिका का निरूपण हुआ है। अंतिम अध्याय में अनरस वर्णन जिनके विषय में कविगण कभी नहीं लिखते थे — वे भी केशव ने अछूते नहीं छोड़े। रसिकप्रिया का आधारभूत ग्रन्थ "वात्स्यायन" **कामसूत्र** तो है ही, रूद्रभट्ट के **श्रृंगार तिलक** का पूरा आधार इसमें ग्रहण किया गया है। कवीन्द्र केशव ने पूरे नवरस श्रीकृष्ण पर घटित कर रसिकजनों को रसमग्न कर दिया है। रसिकों के लिए रसिकप्रिया बनी है। रसिकप्रिया, लक्षण ग्रन्थों में आचार्य केशव की गौरवशाली निधि है जिसकी ख्याति धीरे-धीरे समस्त भारत में फैलती गई जिसे सुनकर सम्वत् 1658 में अकबर सम्राट ने महाकवि केशव और राय प्रवीन को आगरा बुलाने का आदेश भेजा। राजा इन्द्रजित् की सम्मति से शिष्या राय प्रवीन महाकवि केशव के साथ बूढ़े अकबर के दरबार में उपस्थित हो उससे विनम्र निवेदन करती है :

सुवर्ण ग्राहक तीन हैं, कवि, विभिचारी-चोर ।
पग न धरत, संशय करत, तनक न चाहत शोर ॥

विप्र वैद्य नाई नृपति, स्वान सौत मजार ।
जुगल जुरैं इक ठौर पर, होय विरोध अपार ॥

स्वेतरंग सबसे भला, स्वेत भले न केश ।
रमनी रमत न रिपुबदत, सुनो सुजान नरेश ॥

उसकी प्रतिभा से आकर्षित हो अकबर ने राय प्रवीन से कविता में दो प्रश्न किये जिसका राय प्रवीन ने काव्य-उक्ति द्वारा मधुर वाणी में उत्तर दिया ।

सम्राट : **युवन चलत तिय देह की चटक चलत केहि हेत ।**
राय प्रवीन : **मन्मथ करि मसाल कों सैंति सिहारे लेत ।**
सम्राट : **ऊँचे ह्वे सुरबस किये सम है नर बस कीन्ह ।**
राय प्रवीन : **अब पाताल बस करनिकौं ढरकि पयानौं कीन्ह ।**

अंत में अकबर ने राय प्रवीन की प्रशंसा करते हुए कवि केशव से कहा कि मैं आपको एवं आपकी शिष्या को बधाई देता हूं और ओरछा सादर विदा करता हूं। तदोपरांत अकबर ने रामायण और महाभारत (रज़्मनामा) की भांति रसिकप्रिया को आधार मान चित्रों का निर्माण कराया । कहने का तात्पर्य यह है कि रसिकप्रिया पर महाकवि केशव के जीवनकाल में ही सर्वप्रथम मुगल शैली में चित्रण हुआ । इस प्रयास का प्रभाव मालवा, राजस्थान, पहाड़ी एवं बुन्देलखंड के संवेदनशील चित्रकारों पर भी पड़ा । अकबर की समन्वय नीति के परिणामस्वरूप समस्त नरेशों ने उसकी प्रभुसत्ता स्वीकार की और उसके पदचिन्हों का अनुसरण कर भागवत, महाभारत, दुर्गा सप्तसती और प्रेम काव्यों को आधार मान विविध राज्यों में चित्रकारों को प्रोत्साहित किया । इन चितेरों ने कल्पना और अपने परिवेश के अंतर्गत जिन चित्रों का निर्माण किया वह पूर्णतः भारतीयता के अनुकूल थे । फलस्वरूप रसिकप्रिया के प्रत्येक दोहे पर आधारित कलाकारों की कल्पना ने कलाजगत् में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त किया । उन कलाकृतियों का दीर्घकालीन प्रभाव आज भी दर्शनीय है, केवल रचना की दृष्टि से ही नहीं उसके रसयुक्त वर्णन से भी ।

इन चित्रों में नायक-नायिका के अंग-प्रत्यंगों की भाव-भंगिमा और मुद्राओं का लौकिक अंकन, प्रकृति का सतरंगा वैभव और विषय का अनूठा काव्यतम अंकन आदि कवीन्द्र केशव की ही देन है जिसके कारण **रसिकप्रिया** और **बारहमासा** (कविप्रिया) पर आधारित चित्र प्रसिद्धि के चर्मोत्कर्ष पर जा पहुंचे । प्रत्येक चित्र में सौन्दर्य की अभिव्यंजना जैसे मानव सौन्दर्य चित्रण और उनका हाव-भाव, प्रकृति सौन्दर्य वर्णन, अलंकारप्रियता, रसनिरूपण, श्रृंगार वर्णन, संयोग-वियोग, नख-शिख वर्णन तथा विरह मिलन की कोमल वृत्तियों के ये अनुपम चित्र रसिकप्रिया का महत्वपूर्ण भाव दर्शाने में पूर्ण सक्षम हैं ।

कृष्ण के रूप में जन साधारण ने अपनी चेतना, इच्छा, भाव और विचार सबको उस परम् शक्ति में समाहित होते देख उस व्यक्तित्व को इतना अपने निकट पाया कि कृष्ण जन-नायक हो गए। जयदेव रचित **गीत-गोविन्द,** बल्लभाचार्य की कृष्ण भक्ति और मीरा का समर्पित प्रेम, सब कुछ चित्रकारों पर इतना गहन प्रभाव छोड़ता गया कि उन्होंनें कृष्ण ही को प्रेम का अवतार मान लिया और उन्हें चित्रों का विषय बना, उनकी क्रीड़ाओं को मुखरित किया। कलाकार कृष्ण के रूप में सनातन पुरुष और राधा के रूप में सनातन प्रकृति से मोहित थे। तथ्य तो यह है कि यदि कृष्ण को चित्रों की पृष्ठभूमि से विलग कर दिया जाये तो भारतीय चित्रकला का भवन चरमरा कर ढ़ह जाएगा।

रसिकप्रिया में राधा-कृष्ण की विरह-वेदना के चित्रण में राधा-कृष्ण का प्रेम आध्यात्मिकता से प्राणान्वित हुआ है। राधा के अमृतोपम मुख की सुकुमारता का संकेत कमल से दिया जाता है जिसमें सुकुमारता की व्यंजना के अतिरिक्त उस सुकुमार की पवित्रता से प्राप्त आनन्द का भी बोध होने लगता है। राधा का मुख-मण्डल रस सिन्धु का विविर्द्धन करने वाले पूर्णेन्दु होने के साथ ही पवित्र प्रेम-राशि के सरोवर का विकसित सरोज है। इनके भ्रमर कृष्ण द्वारा उनके मकरन्दपान के लिए आ पहुंचने पर राधा की दशा ठीक वैसी ही हो जाती है जैसे – कहि न जाइ या सुख की महिमा ज्यों गूंगें गुर खेयो, इससे जिस प्रकार के सूक्ष्म भाव प्रस्फुटित होते हैं उन्हें विविध समय में कलाकारों ने अलंकारिक अभिप्रायों के आधार पर बड़ी बारीकी से चित्रित कर उनकी सम्पूर्ण महिमा चित्रों में समाहित कर दी है।

मुगल दरबार में रसिकप्रिया पर आधारित चित्रों के निर्माण से विभिन्न हिन्दू राजाओं ने अपने आश्रित चित्रकारों को उसके चित्रण हेतु प्रेरित किया। फलस्वरूप मालवा में 1634 ई. के लगभग रसिकप्रिया कलाकारों का विषय बन गई। इन चित्रों में एक दुर्लभ कृति है जिसमें केशव द्वारा राजा इन्द्रजित् को रसिकप्रिया ग्रन्थ भेंट करते दिखाया गया है। इन चित्रों में तत्कालीन स्थापत्य की झलक भी परिलक्षित होती है।

मेवाड़ के गौरवपूर्ण इतिहास में यहां की चित्रांकन परम्परा का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है जिसके सफल चितेरे साहिबदीन ने विभिन्न पौराणिक विषयों का चित्रण किया। मेवाड़ राज्य में राणा जगतसिंह प्रथम (1628-52) के राज्यकाल में साहिबदीन चितेरे और उसके शिष्यों ने रसिकप्रिया के चित्रों का दमकते रंगों में अंकन किया। यहीं से पीताम्बरधारी कृष्ण और राजस्थानी परिधान में राधा का वैविध्य पूर्ण अंकन प्रारम्भ होता है। मुगल स्थापत्य-चित्रण का राजस्थानी चित्रों में आरम्भ भी इसी कलाकार की देन है जो 1630 ई. से 1660 ई. तक साहिबदीन शैली में चित्रित होता रहा। तदोपरान्त भावी कलाकारों ने इस विषय को 19वीं शताब्दी के मध्य तक चित्रण किया।

बीकानेर में उस्ताद रुकनुद्दीन महाराजा अनूपसिंह (1669-98) के प्रमुख चित्रकार थे जिन्होंने रसिकप्रिया पर बीकानेर शैली में अन्यतम चित्र अंकित किये। तद्पश्चात् रुकनुद्दीन के प्रमुख शिष्य नूरुद्दीन ने भी रसिकप्रिया के गौरवपूर्ण चित्रण को गतिमान

रखा। इन चित्रों में मुगल कलात्मकता का पूर्ण सम्मिश्रण हुआ जिसमें राजस्थानी परिधानों की महत्ता विशेष है।

बून्दी शैली ने रीतिकालीन काव्य को चक्षुगोचर बनाने में कोई प्रयत्न शेष नहीं छोड़ा। सूक्ष्म से सूक्ष्म काव्यभाव को भी रेखाओं की परिधि में बांधा, साथ ही काव्य में अपनी कल्पना की उड़ानों से अनायास ही एक नवीन रूप प्रदान किया। इस शैली के रसिकप्रिया पर आधारित चित्र मानो एक ही पथ के पथिक हों जिनमें हरे रंग को विविध रंगों के अनुपात में यथोचित उपयोग कर चित्र को महत्वपूर्ण बना दिया। आकृति से लेकर प्रकृति चित्रण तक में इतने भावात्मक प्रसंग हैं, जिसमें बून्दी शैली अपनी मौलिकता का प्रदर्शन करते हुए भारतीय चित्रकला में विशिष्ट स्थान रखती है। कोटा चित्रकारों ने भी रसिकप्रिया के निरुपण में बून्दी शैली का अनुसरण कर कोटा शैली के नाम से ख्याति प्राप्त की। 18वीं शताब्दी में जोधपुर शैली के कलाकारों ने भी रसिकप्रिया का चित्रण किया। इन चित्रों में लाल, पीले और केसरिया रंग का बाहुल्य है। जयपुर के चित्रकारों द्वारा भी रसिकप्रिया का भावपूर्ण अंकन 1850 ई. तक होता रहा। राजस्थान में रसिकप्रिया की लोकप्रियता से पहाड़ी क्षेत्र भी अछूता नहीं रहा। कांगड़ा के राजा संसारचंद के संरक्षण से प्रेरित कलाकारों ने कृष्ण लीलाओं से रसिकप्रिया का विषयगत अंकन किया जिनमें लयपूर्ण रेखाएं और सौम्य रंगों का समायोजन मानवीय चेतना की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है। अन्य किसी भी कला शैली में साहित्य तथा कला संबंधी विचारों का इतना सफल और समरूप सामंजस्य परिलक्षित नहीं होता। चम्बा, मंडी, गढ़वाल और 19वीं शताब्दी में चित्रित सिख कलम के चित्र भी उपरोक्त उल्लेखित भाव निरुपण में सफल हुए हैं।

राजस्थान और पहाड़ी क्षेत्रों में केशव रचित रसिकप्रिया पर अंकित चित्रों ने बुन्देलखण्ड के कलाकारों को भी प्रेरित किया। कुछ इतिहासकारों का मत है कि 1634 ई. के मालवा शैली के महत्वपूर्ण रसिकप्रिया के चित्र भी बुन्देलखण्ड में ही चित्रित हुए परन्तु प्रमाणों के अभाव के कारण इस तथ्य की पुष्टि नहीं हुई। राजा वीरसिंहजूदेव जहांगीर के विश्वसनीय मित्रों में से थे जिन्होंने उसके ओरछा आगमन के सम्मान में जहांगीर महल का निर्माण कराया। यह महल स्थापत्य की दृष्टि से एक अनुपम कला निधि है जिसकी छतों और दीवारों पर चित्रों का अंकन कराया गया था। इसी काल में महाकवि केशव ने **जहांगीर-जस-चन्द्रिका** की रचना की जो जहांगीर को भेंटस्वरूप दी जानी थी। वीरसिंहजूदेव के निधन हो जाने पर ओरछा राज्य दो भागों, दतिया और ओरछा में विभाजित हो गया जहां चित्रकारों ने अपने-अपने आश्रयदाताओं की इच्छानुरूप चित्रांकन कर बुन्देली कला को ख्याति प्रदान की। अब यहां भित्ति चित्रों के स्थान पर लघु चित्रों का निर्माण होने लगा। बुन्देली शश्यश्यामला धरती पर यदि हम विहंगम दृष्टि डालें तो हमें बुन्देली कला की प्रगति और उसके कीर्तिमान का बोध, प्राप्त लघुचित्रों के माध्यम से सहज ही होने लगता है। बुन्देली शैली के चित्रों की

समता अन्य शैलियों से की जा सकती है यद्यपि बुन्देली चित्रों में विषय की विविधता अधिक नहीं और न ही अभिप्रायों की अधिकता है जैसी कि मालवा अथवा पहाड़ी शैलियों में उपलब्ध है। किन्तु रंगविधान और रेखाओं में साम्य अवश्य दिखाई पड़ता है। अधिकांश चित्र नायक-नायिका भेद पर आधारित विषयों पर रचे गए। चित्रों में स्त्री-पुरुषों की बड़ी-बड़ी आंखे और नुकीली मुख मुद्रा की चित्रण विधि के कारण इन चित्रों को सरलता से पहचाना जा सकता है। इन चित्रों की शैली अन्य शैलियों से सर्वथा भिन्न है और उसमें अपना निजस्व है।

वास्तव में रसिकप्रिया कला और सौन्दर्य का प्रतीकात्मक काव्य है जिससे प्रेरित हो विविध शैलियों के कलाकारों ने दिव्य अनुभूति, तन्मयता और प्रकृति से तारतम्य स्थापित कर चित्रण किया है। रसिकप्रिया और बारहमासा चित्र केवल चित्रात्मक कल्पना ही नहीं, अपितु चित्रकारों के पुष्ट रेखांकन एवं उदीप्त रंगों के द्वारा प्रकृति में उनकी आत्म-विस्मृति का परिचय भी है । चित्रकार प्रायः छतरपुरी और सियालकोटी ठर्रा कागज चित्रण हेतु प्रयोग में लेते थे। चित्र निर्माण से पूर्व इसे और सुदृढ करने के लिये वे लोग इस कागज की दो तीन पर्त जोड़कर, उस पर सफेदे का लेप कर लाल, पीले, नीले तथा हरे रंगों का बहुतायत से प्रयोग करते थे। कहीं कहीं सुनहरे रंग का भी प्रयोग मिलता है । आवश्यकता पूर्ति के लिये उन्होंने गेरू, रामरज, सिन्दूर और ईंगुर आदि का भी यथोचित उपयोग किया है। चित्र को और अधिक संतुलित कर आकर्षक बनाने के उद्देश्य से उन्होंने सफेद रंग भी उपयोग किया है। उल्लेखनीय है कि महाकवि केशव को रंगों के विषय में भी व्यापक ज्ञान था । उन्होंने रंगों की विशेषता पर कि किस रंग का क्या उद्देश्य है, विशेष उल्लेख किया है।

संक्षेप में रीतिकाल के शिरोमणि कवि केशव ने क्रीडाप्रिय कृष्ण और गौरांगी राधा के सौंदर्य को रसिकप्रिया में जिस असीम रस-युक्त सौन्दर्य और प्राकृतिक उत्पादनों के सहारे खड़ा किया है, उतनी ही गूढ़ कल्पना और कुशलता से विविध शैली के कलाकारों ने इसका भावोद्रेक चित्रण कर केशव साहित्य को समृद्ध कर दिया है।
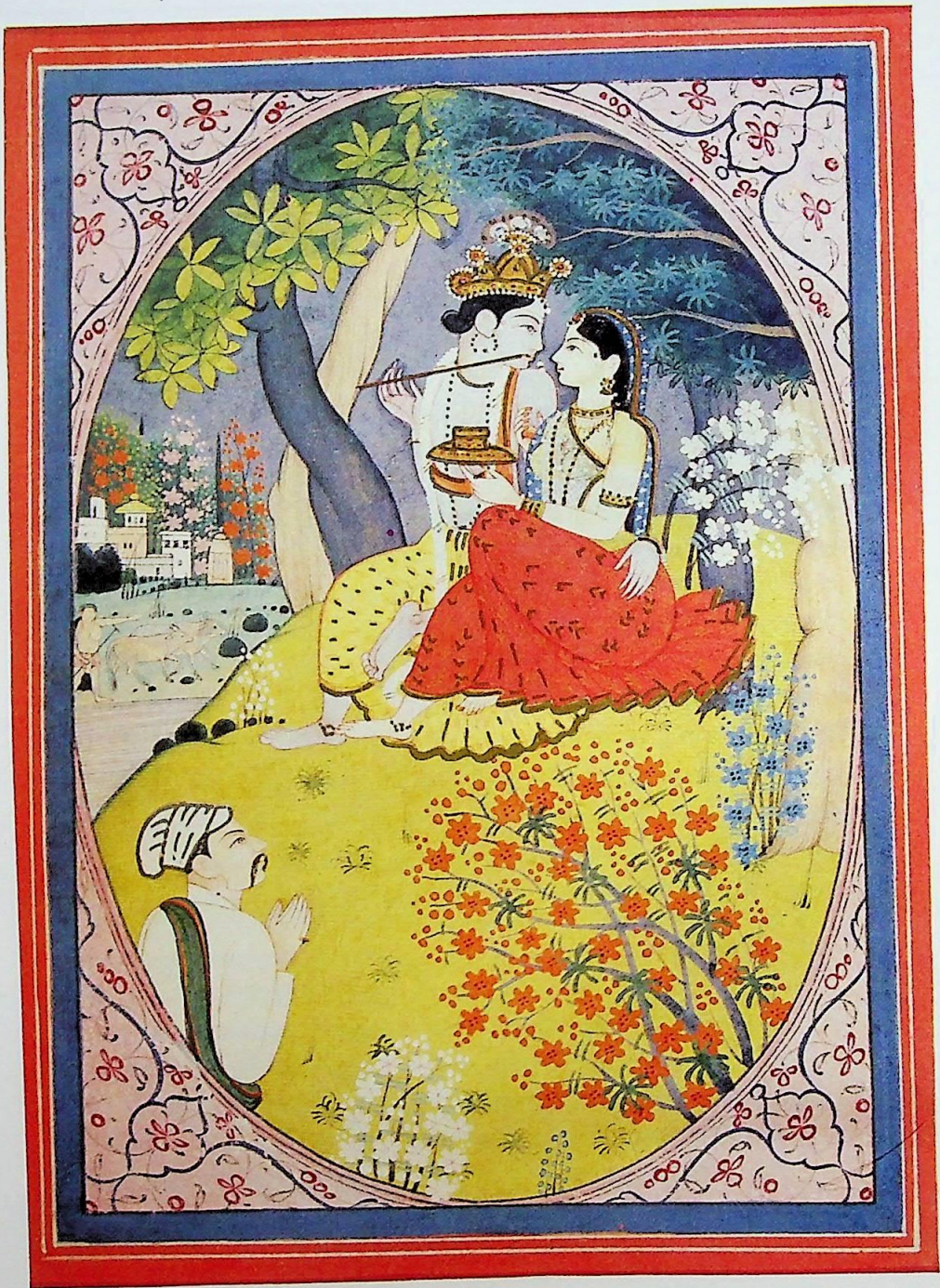
कृष्ण वंदना

कांगड़ा, लगभग 1800 ई.

श्री वृषभानुकुमारिहेत श्रृंगाररूप भय।
बास हासरस हरे मातुबंधन करुनामय।
केसी प्रति अति रौद्र बीर मारो बत्सासुर।
भय दावानलपान पियो बीभत्स बकी उर।

अति अद्‌भुत बंचि बिरंचिमति, सांत संततै सोच चित।
कहि केसव सेवहु रसिकजन, नवरसमय ब्रजराज नित।

जैसे राधा के लिए कृष्ण श्रृंगार-रस रूप हुए, गोपियों का चीर हरण कर हास्यरस-रूप बने, माता देवकी का कारावास में कष्ट देख करुणरस हुए, केशी के प्रति क्रोध कर रौद्र-रूप धारण किया, वत्सासुर का वध कर वीर रस-मय हुए, दावाग्नि पान कर भयानक रस-युक्त हुए तथा अर्जुन का मोह देख शांतरस-मय लक्षित हुए, उस नवरसमय ब्रजराज की सेवा व वंदना रसिक जनों को नित्य करनी चाहिए।

कृष्ण ने मनुष्य की समस्त आकर्षण-वृत्तियों को परम सुन्दर की चिर-रमणीयता में रमा कर उन्हें आह्लादित किया है। कृष्ण का सभी कुछ मधुर है, सर्वांग मधुर है, वेणुवेत्र मधुर हैं, सहचर मधुर हैं, क्रीड़ा-स्थली मधुर है और वे स्वयं लीला-मधुर हैं।

कांगड़ा शैली के इस विशिष्ट चित्र में हल्की अम्बर रूपी पृष्ठभूमि पर प्राकृतिक छटा में पीताम्बरधारी कृष्ण का बांसुरी-वादन मनोहारी लगता है। लाल परिधान में राधा ताम्बूल पात्र लिये कृष्ण के समीप बैठी कुन्जविहार कर रही हैं। दृश्य में जुही, चंपक आदि विविध फूलों के अंकन से ऋतुराज बसंत के आगमन का बोध होने लगा है जहां एक ओर महाकवि केशव राधा-माधव की करबद्ध बन्दना कर रहे हैं।
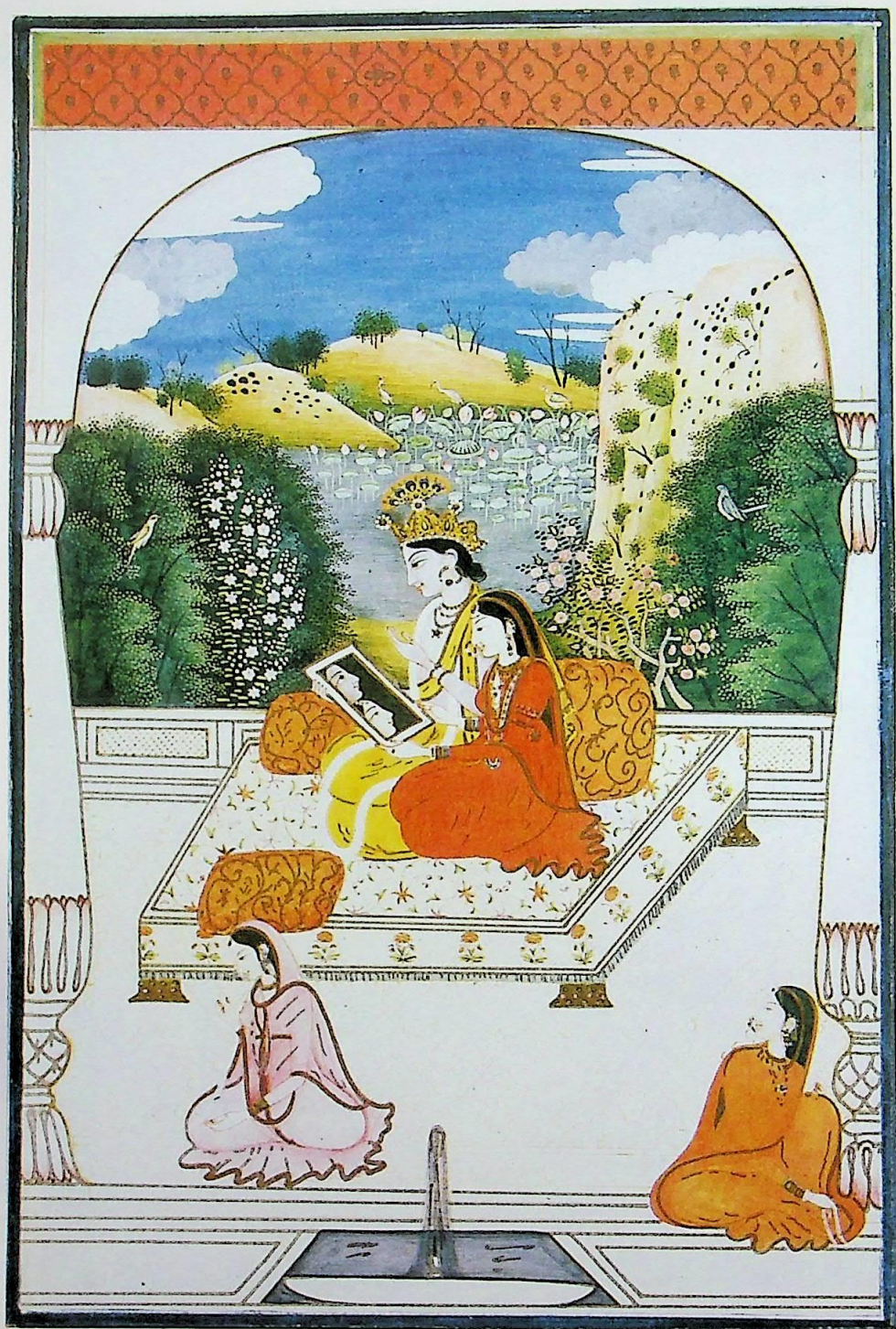
प्रतिबिम्ब का रूप-रसपान

गढ़वाल, लगभग 1795 ई.

केसव एक समै हरि-राधिका आसन एक लसैं रंगभीनें।
आनंद सों तिय-आनन की दुति देखत दर्पन में दृग दीनें।
भाल के लाल में बाल बिलोकि तहीं भरि लालन लोचन लीनें।
सासन पीय सबासन सीय हुतासन में मनो आसन कीनें।

एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि एक बार पीताम्बरधारी कृष्ण और राधा एक ही आसन पर विराजे थे। कृष्ण उल्लसित हो दर्पण में राधिका की मुख छवि का एकटक अवलोकन कर रहे थे। (दर्पण में राधा का प्रतिबिम्ब पड़ रहा था। प्रतिबिम्ब में उसके माथे पर लगी टिकुली में राधा का पुनः प्रतिबिम्ब पड़ रहा था) माथे की बेंदी में जड़े माणिक में पड़ रहे राधा के प्रतिबिम्ब को निहार श्री कृष्ण के नयन अश्रुपूर्ण हो उठे। (उन्हें अपने रामावतार के उस समय की स्मृति हो आई जब राम की आज्ञा से सीता ने अग्नि में प्रवेश किया था) राधा वैसी ही लग रही थी मानो राम की आज्ञा से सीता ने अग्नि में प्रवेश किया हो।

पहाड़ी चित्रकला में गढ़वाल शैली का विशेष स्थान है। केशव के उपरोक्त सवैये पर अंकित यह चित्र इस शैली की अनुपम कृति है। रंगों का चयन, संतुलित संयोजन और पृष्ठभूमि में पहाड़ी नैसर्गिक चित्रण बहुत ही सौहार्दपूर्ण ढंग से किया गया है। सुन्दर चौकी पर बैठी राधा के अन्जित नेत्र, कनक गिरि रूपी कुच मंडल और सुडौल उरूयुग्म के अलौकिक सौन्दर्य का आनन्द, श्रीकृष्ण दर्पण में पड़ रहे प्रतिबिम्ब में लेते दिखाई देते हैं। उसी प्रकार राधा भी पीताम्बरधारी माधव की छवि निहार रहीं हैं जिनके गले में बैजयन्ती माला, सिर पर मयूरपंखी स्वर्ण मुकुट एवं कानों में कृण्डल सुहाते हैं जो इस चित्र की विशेषता है। अग्रिम भाग में फुहारे का अंकन कर चित्रकार ने भवन को राजसी वातावरण की झलक देने का सफल प्रयास किया है।
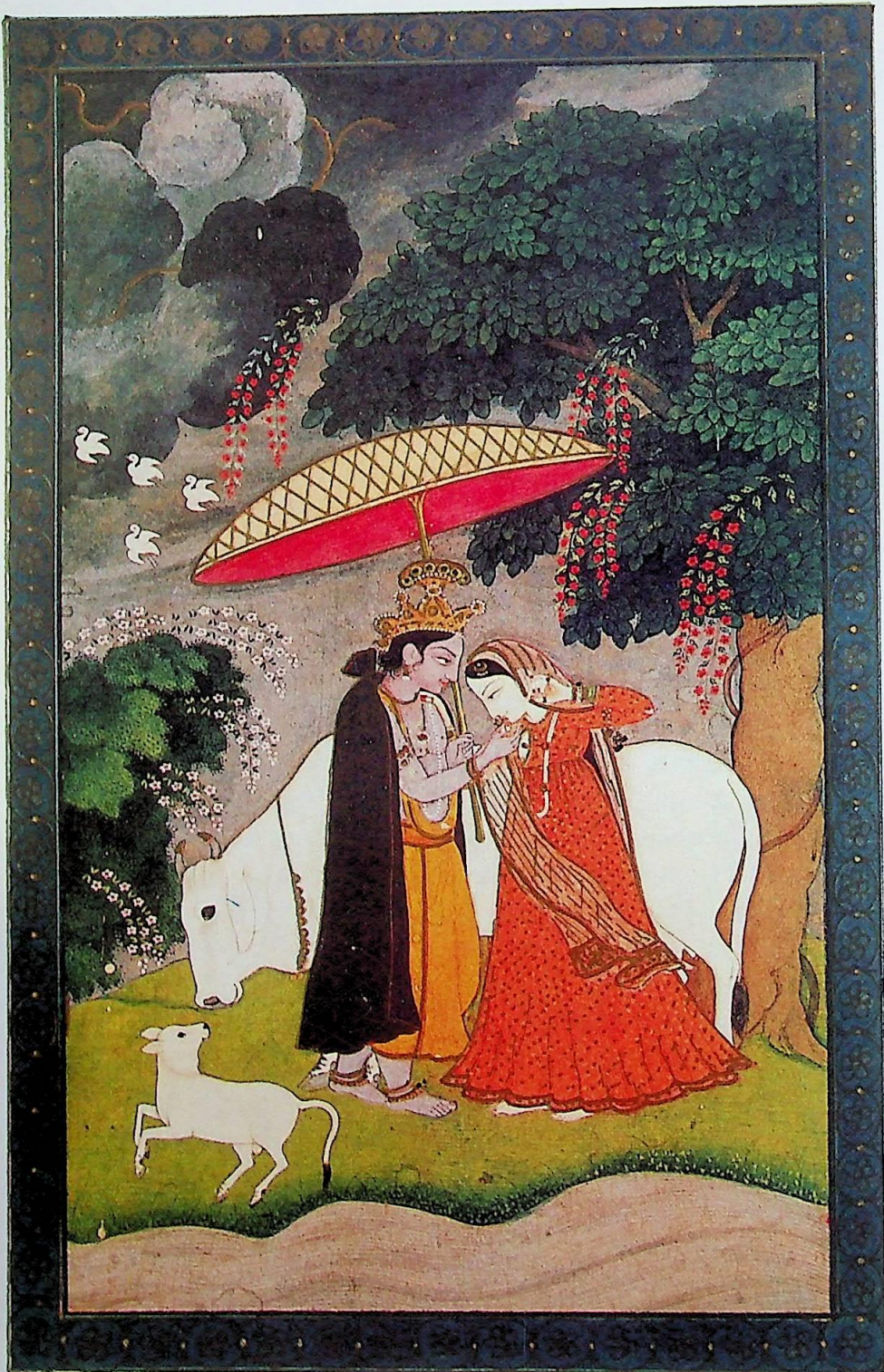
राधा कृष्ण का जल बिहार

कांगड़ा, लगभग 1800 ई

हरि राधिका मानसरोवर के तट ठाढ़े री हाथ सों हाथ छियें।
पिय के सिर पाग प्रिया मुक्ताहल छाजत माल दुहूँनि हियें।
कटि केसव काछनी सेत कछें सबही तन, चंदन चित्र कियें।
निकसे छिति छीरसमुद्र ही तें संग श्रीपति मानहु श्रीत्र्य लियें।

सरोवर के तट पर पावस कृष्ण, दामिनी राधा को पत्तों की सेज पर पुष्पित कुंज में अपने उर से लगाये जल विहार हेतु रसमग्न खड़े हैं। गगन में गहरे घनों ने उमड़-घुमड़ कर और चपला (विजुरी) ने चमक-दमक कर वर्षा गमन का संदेश भी दिया हैं जिसे देख सारस भी गद्‌गद् हो गगन विहार करने लगे हैं। काली कामरी ओढ़े पीताम्बरधारी कृष्ण मयूर पंख से सुशोभित मुकुट धारण किये हैं और राधा रक्त रंगी लहंगा पहने है। चपला की चमक और वर्षा की बून्दों के गिरने से राधा ने कृष्ण का एक हाथ पकड़ लिया है। कृष्ण ने दूसरे हाथ से थामी हुई छतरी से राधा को वर्षा से सुरक्षा प्रदान कर दी है। धेनु का ममत्व बछड़े को स्फूर्ति प्रदान कर रहा है। समस्त वातावरण सुमन-सुवासित लगता है जिससे चित्र में एकान्त वातावरण की सुगन्ध आने लगी है एवं समस्त वातावरण आनन्दघन से आच्छादित हो गया है।

भारतीय लघुचित्रों में कांगड़ा शैली अपनी लयपूर्ण रेखाओं और सौम्य रंगों की विशेषता के कारण सर्वाधिक सुन्दर है। इस सवैये का चित्रकार ने भावपूर्ण चित्रण किया है जिसमें अर्थपूर्ण सौन्दर्य एवं कला का समायोजन है।
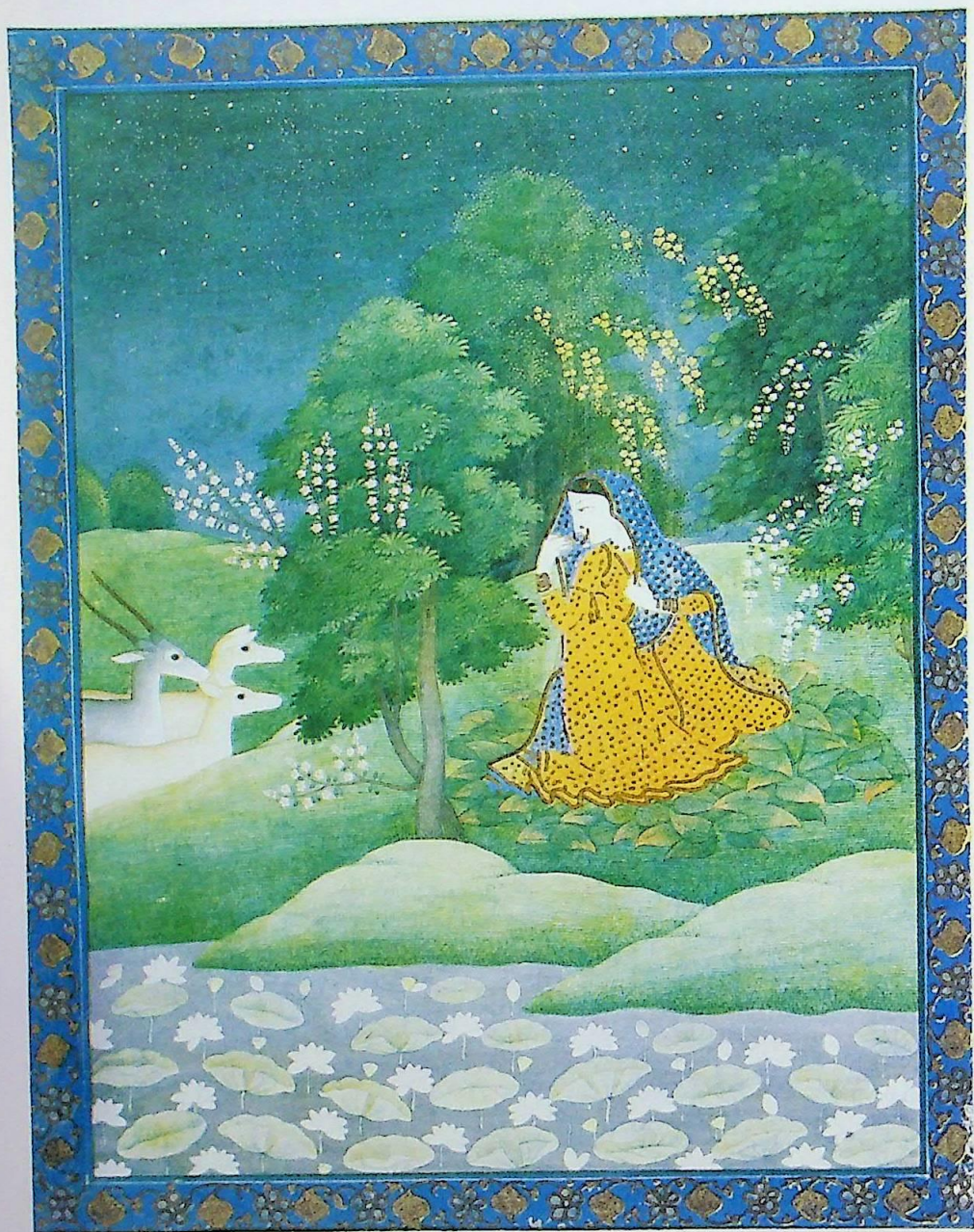
उत्का नायिका

कांगड़ा, लगभग 1800 ई.

किधौं गृह-काज कै न छूटत सखा-समाज,
किधौं कछू आज ब्रत-बासर बिभात तैं।
दीनो तैं न सोध, किधौं काहू सों भयो बिरोध,
उपज्यो प्रबोध किधौं उर अवदात तैं।
सुख में न देह किधौं मोही सों कपटनेह,
किधौं देखि मेह आति डरे अधरात तैं।
किधौं मेरी प्रीति की प्रतीति लेत केसौदास,
अजहूँ न आए मन सुधौं कौनी बात तैं।

विरह व्यथा के कारण राधा अमावस्या की रात्रि की चन्द्ररेखा (कहु तिथि ससिरेहा) के समान हो गई। वह सोच रही है कि घनश्याम को घर में कौन-सा काम आ पड़ा है जिसे छोड़ कर वे नहीं आ सके। आज व्रत के दिन का आरम्भ होते ही किसी से कहीं विवाद तो नहीं हो गया अथवा निर्मल हृदय होने से वैराग्य तो नहीं ले लिया जो नहीं आये। कहीं आधी रात को घर लौटने के कारण अस्वस्थ तो नहीं हैं या मुझसे दिखावे का ही स्नेह करते हैं या मेरे स्नेह की परीक्षा ले रहे हैं। हे मन, नहीं मालूम किस कारण श्याम अभी तक नहीं आये।

कांगड़ा शैली के इस चित्र में राधा का लावण्य उसके अलंकृत अथवा अन-अलंकृत अंग-प्रत्यंग से झलकने लगा है। जामुनी और हरे रंग के पत्तों के बिछौने पर हल्के नीले और नारंगी परिधान में विचार-मग्न राधा को चांदनी रात भी अग्नि के समान जला रही है। वह अपने नायक की प्रतीक्षा में नाना प्रकार की शंकाओं में उलझी हुई प्रतीत होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि छिटकी चांदनी में मृगों को देख नायिका की उत्कंठा द्विगुणित हो गयी है।
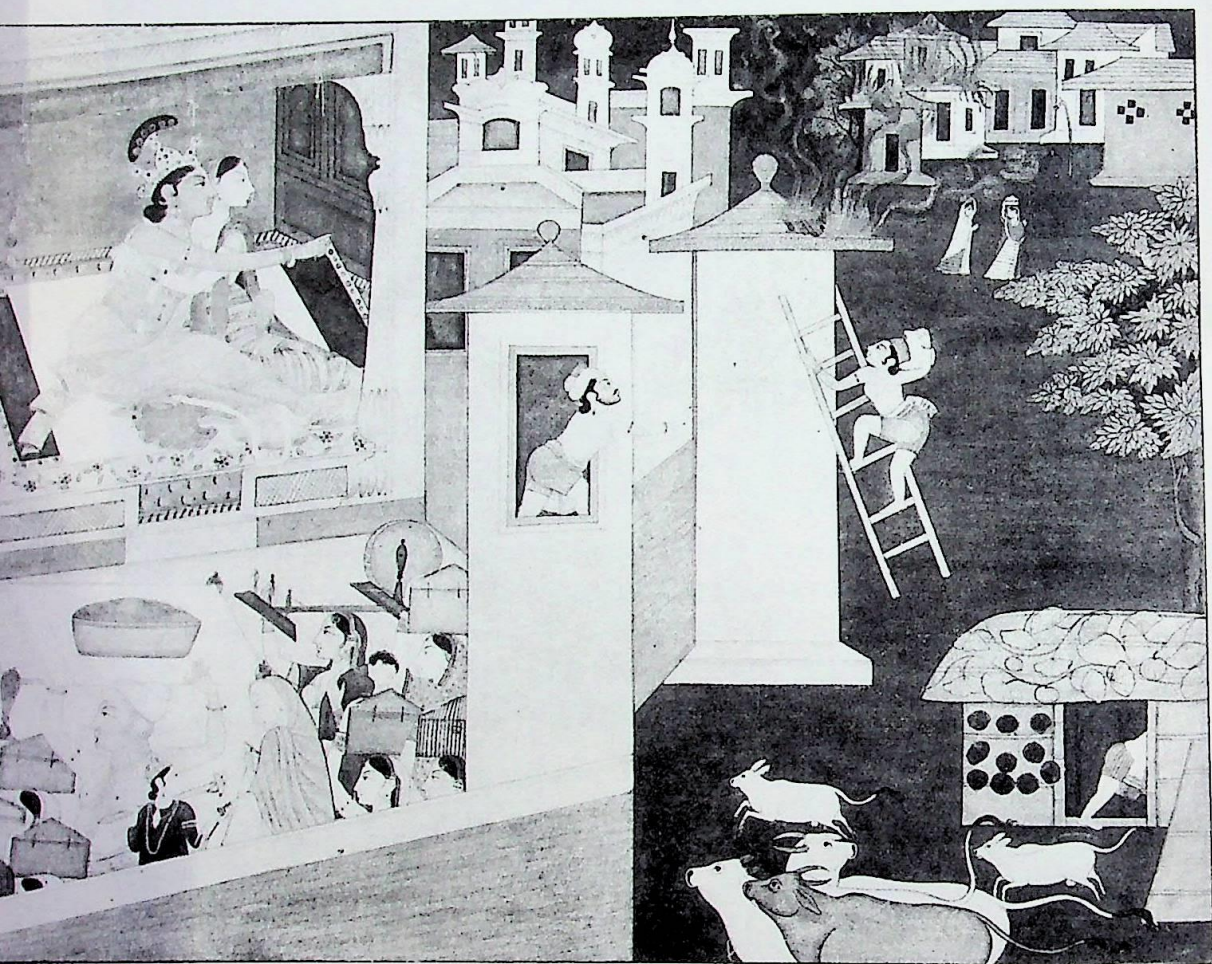
अतिभय में राधा-कृष्ण मिलन

कांगड़ा, लगभग 1800 ई.

जानि आगि लागी वृषभान के निकट भौन,
दौरि ब्रजबासी चढ़े चहूँ दिसि धाइ कै।
जहाँ तहाँ सोर भारी भीर नर-नारिन की,
सब ही की छूट गई लाज हाइ भाइ कै।
ऐसे में कुँवर कान्ह सारो सुक बाहिर कै,
राधिका जगाई और जुवती जगाइकै।
लोचन बिसाल चार चिबुक कपोल चूमि,
चंपे की सी माला लाल लीनी उर लाइकै।

एक बार बृषभान (राधा के पिता) के पड़ौस के घर में आग लग गई। चारों ओर से दौड़ कर बृजवासी आग बुझाने वहां एकत्रित हो गए। वृष्.भान भी खबर सुनकर अपनायत में वहां जा पहुंचे। यह दृश्य देखने नर-नारियों की एक भीड़-सी वहां एकत्रित हो गई। इस अग्नि से भयभीत हो गृहवासी अपनी सम्पत्ति लेकर भागने लगे। इस भयभीत परिस्थिति का लाभ उठा कृष्ण राधा के शयन कक्ष में प्रवेश कर गए जहां राधा निद्रामग्न थी। कृष्ण ने राधा की निद्राभंग कर जब उसे इस अग्निकाण्ड की सूचना दी तो राधा भयभीत हो कृष्ण की भुजाओं में सिमट गई।

चित्र दृश्य राधा के शयन कक्ष का है जिसमें राधा कृष्ण से आलिंगित हो उस ओर देख रही है जिस ओर आग लगी है। चित्र देखने पर यह आभास होता है कि कृष्ण ने राधा के इन्दुरूपी बदन, चकोर समान लोचन, अधरों एव उसके श्रीफलों का रसपान करने के उद्देश्य से ही अग्निकाण्ड की युक्ति का प्रयोग किया।

जिस प्रकार मधुकर सरोज के प्रति सहज ही धावित होता है, उसी प्रकार कृष्ण भी राधा के ललित सौन्दर्य के प्रति सहज ही धावित होते हैं। वे उसके मुखाम्बुज को देखे बिना नहीं रह सकते। राधा के सौंदर्य का यह मनोहारी रसाल रूप कृष्ण को सुख प्रदान करता है क्योंकि इस अनंगना ने पूर्ण रूप से रति राज का चित्त चुरा लिया है। चित्र में छविकार ने राधा का सौन्दर्य निरुपण कर कामी कृष्ण को अपनी मोहक छवि पर लज्जित-सा कर दिया है। ब्रज वनिताएं उनकी छवि पर सर्वस्व अर्पण करने को आतुर हैं, परन्तु यहां ब्रजराज राधा के रूपांकन पर विमोहित हुए नहीं रहते। यही चित्रकार का कला-कौशल है। उसने मात्र राधा-कृष्ण का चित्रांकन ही नहीं किया है बल्कि उनके विशालतर सत्य को भी नैसर्गिक रूप दिया है।

राधा-कृष्ण का हेला हाव

कांगड़ा, लगभग 1790-95 ई.

बेनु सुनाइ बुलाई लई बन भौन बुलाइ कै भाँति भली को।
फूलि गयो मन फूल्यो बिलोकत केसव कानन रासथली को।
अधरारस प्याइ कियो परिरंभन चुंबन कै मुख कामकली को।
हेलहिं श्रीहरि नागर आजु हरयो मन श्रीबृषभानुलली को।

चांदनी छटा में चतुर मोहन ने बंशी बजाकर अकेली राधा को तड़ाग के किनारे कुंज में बुला लिया। जब राधा ने कृष्ण को देखा तो वह उसी प्रकार आनन्दोन्मत्त हो उठी जैसे नलिनी (कमलिनी) प्रिय सूर्य को देखते ही विकसित हो जाती है। उसकी यह दशा देख कर श्रीकृष्ण ने खेल ही खेल में वृषभानु की पुत्री कमलरूपी कली का आलिंगन कर उसके अधरों का रसपान कर लिया।

कांगड़ा शैली की यह उत्तम कृतियों में से एक चित्र है जिसमें कलाकार ने केशव के उपरोक्त सवैये को अपनी तूलिका से भावपूर्ण अंकित किया है। पीताम्बरधारी श्याम मुकुट पहने श्वेत परिधान में राधा का आलिंगन कर उसके अधरों का मकरन्दपान कर रहे हैं। हाथ में बंशी थामें हैं जिसकी ध्वनि लता कुन्जों में उसी प्रकार फैल रही है जैसे पूर्णिमा की चांदनी छिटक कर चारों ओर फैल रही हो। कृष्ण द्वारा राधा का आलिंगन देख संभवतः चन्द्रमा को लाज आने लगी है और वह उस तड़ाग में जा छिपा है जहां कमल खिले हैं। पल्लवों से सुसज्जित तमाल तरु कस्तूरी जैसी सुगन्ध बिखेरते प्रतीत होते हैं और सुन्दर लवंग लतिकाएं मलय पवन द्वारा आलिंगित हो रही हैं।

हल्के रंगों के प्रयोग ने भावो को और व्यापक अर्थ प्रदान किया है। राधा की सुनहरी ओढ़नी का उसके श्वेत परिधान के साथ सुन्दर तालमेल बैठा है। कलाकार ने विषयगत हल्के रंगों के चयन का भी बड़ी बारीकी से अध्ययन किया प्रतीत होता है।

लीला हाव

कांगड़ा, लगभग 1790-95 ई.

झाँकि झरोखनि में चढ़ि ऊँचे अवासनि ऊपर देखन धावै।
निंदत गोपचरित्रनि कों कहि केसव ध्यान ककै गुन गावै।
चित्रित चित्र में आपुन यों अवलोकत आनँद सों उर लावै।
आँगन तैं घर में घर तें फिरि आँगन बासर कों बिरगावै।

जब राधा-कृष्ण का पहला समागम होता है तो वे रस रंग में भूल जाते हैं कि कौन सा वस्त्र किसका है। कृष्ण सुरंग ओढ़नी लेकर लौटते हैं और राधा पीताम्बर लेकर। परन्तु यह दूसरी बार अनजाने में नहीं, जानबूझकर हो रहा है। राधा कृष्ण बनकर उनके समस्त श्रृंगार करती हैं और कृष्ण राधा के। पहले राधा ने कृष्ण के वस्त्र धारण करते समय चारों ओर सजगता से देख लिया कि उसे कोई देख न ले। परन्तु जब वह कृष्ण बनकर कृष्ण को लाड़ली राधा के रूप में देखती है, तब राधा ही ठगी जाती है और उनके उलटे हुए कदली स्तम्भ से सुडौल उरु युग्म पर सजे कांचे श्रीफल का आनन्द कृष्ण उसी प्रकार लेते हैं जैसे मधुलोभी भ्रमर कमल का रसपान कर संध्या समय मधुपुरी में ही बंद हो जाता है।

जिस तिरोभाव के आवरण ने सच्चिदानन्द को तिरोहित कर रखा है, उस आवरण को हटा कर ही सच्चिदानंदरूपता का लाभ हो सकता है। यह आवरण हटते ही जीव में आनंद का आविर्भाव हो जाता है। इस आवरण के हटाने के लिये न तो शास्त्राध्ययन, न मेधा, न बहुश्रुत होना सहायक है किन्तु पुष्टि की प्राप्ति अनिवार्य है। जिस पर वह रसस्वरूप ब्रह्म अनुग्रह करता है उसके लिये वह अपने आपको अनावृत्त कर देता है, तब जीव जीव नहीं रह जाता, रसयिता की रसास्वाद मात्र की स्थिति में अवस्थिति हो जाती है।

राधा-कृष्ण का वस्त्र परिवर्तन वस्तुतः लौकिक प्यार का अलौकिक भावांतर है। श्रीकृष्ण ने स्वेच्छा से स्त्रीरूप धारण कर रसोपभोग का अवसर खोज लिया है। उन्होंने सारी-कंचुकी पहन, केसर का टीका लगाकर राधा का रूप रचा है। उसी प्रकार राधा ने भी कृष्णरूप धरा है। तदोपरान्त दोनों सुख-पुंज में विलास करने लगे। कांगड़ा शैली के इस अनुपम चित्र में रंगों के सौन्दर्यपूर्ण समायोजन से कलाकार ने भावानुभूति पूर्ण हो मानवीय आनन्द का सारतत्व प्रेषित किया है।

स्वाधीनपतिका नायिका

कांगड़ा, लगभग 1810 ई.

केसव जीवन जो ब्रज को पुनि जीवहु तें अति बापहि भावै।
जापर देव-अदेव-कुमारिनि वारत माइ न बार लगावै।
ता हरि पै तूँ गँवार की बेटी महावर पाइ झवाँइ दिवावै।
हौं तौ बची अब हँसिनहीं ऐसें और जौ देखै तौ उतरु आवै।

राधा के विशाल नेत्र, विशाल भाल, गौरवर्ण, नीलवसन की फरिया, पीठ पर झूलती वेणी, कृष्ण के हृदय पर ऐसा प्रभाव डालते हैं कि कृष्ण देखते ही रीझ जाते हैं।

सखी राधा से कह रही है कि हे सखी! कृष्ण ब्रजवासियों के प्राण हैं जिनके पिताश्री उन्हें प्राणों से भी अधिक प्यारा समझते हैं। माता यशोदा जिन पर नर-कुमारियों को न्यौछावर करने में तनिक देर नहीं लगाती, ऐसे कृष्ण से तू ग्रामवासी की छोकरी होकर पैरों को झांवे से रगड़वाकर महावर लगवाती है। मैं तो यह देख हंस कर टाल रहीं हूं, यदि कोई अन्य देखे तो क्या तुझसे कोई उत्तर देते बनेगा?

महाकवि केशव ने अपने सवैये में कृष्ण के प्रेमोन्माद की सीमाओं को तोड़ डाला है जिसे कांगड़ा शैली के कलाकार ने भावपूर्ण अभिव्यक्ति दी है। चित्र में हवेली के एक कक्ष का अंकन है जिसमें कांगड़ा स्थापत्यकला झलकती है। ऊँचे आसन पर विराजी राधा के श्रीचरणों में कृष्ण नीचे बैठ, महावर लगाने में तल्लीन हैं। कृष्ण के पीछे खड़ी सखी के तीखे उलाहने से राधा के मन पर कोई असर हुआ नहीं दिखता। चित्र में नायक-नायिका की निकटता का रसमय दृष्य देख सहृदय दर्शक भावविभोर होने लगता है।

खंडिता नायिका

कांगड़ा, लगभग 1800 ई.

आँखिनि जौ सूझत न काननि तौ सुनियत,
केसौदास जैसे तुम लोकनि में गाए हौ।
बंस की बिसारी सुधिकाक ज्यों चुनत फिरौ,
जूठे सीठे सीथ सठ-ईठ दीठ ठाए हौ।
दूरि दूरि करतहूँ दौरि दौरि गहौ पाइ,
जानौ न कुठौरु ठौरु जानि जिय पाए हौ।
काको घर घालिबे कौं बसे कहाँ घनश्याम,
घूघू ज्यौं घुसन प्रात मेरे गृह आए हौ।

राधा कृष्ण को ताड़ना देते हुए कह रही है कि मेरी आँखों को तो तुम्हारे कहे अनुसार ठीक नहीं दिखाई देता परन्तु कानों से तो वे सब बातें सुनती ही रहती हूं जिनके विषय में दुनिया तुम्हारी चर्चा करती रहती है। आपने अपने कुल तक को लजा दिया है। आप एक कौए के समान छोटे स्तर से तत्वहीन अन्न-कण इधर-उधर चुगते फिरते हो। आप में और शठों में कोई अन्तर नहीं रह गया है। जितनी बार दुत्कारती हूँ उतनी ही बार मेरे पैर पकड़ने लगते हो। आप कभी ठौर-कुठौर में अन्तर समझोगे ही नहीं, यह मैंने भली-भांति समझ लिया है। भोर होते ही आप मेरे घर में घुसते चले आ रहे हो।

कांगड़ा शैली के इस चित्र में दृश्य आंगन का है जहां पौ फटते ही (प्रभात में) कृष्ण हाथ में गले का टूटा हार पकड़े और मुँह लटकाये चले आ रहे हैं। उनके आने की आहट पाकर राधा ने घर से बाहर ही उन पर प्रश्नों की बौछार लगा दी है, किन्तु उनके पास किसी भी प्रश्न का उत्तर नहीं है। उनके द्वारा रात अन्यत्र बिताने का प्रमाण उनकी लाल आँखें दे रही हैं, जो रात्रि जागरण के कारण हुई हैं। चित्रकार ने दोषी कृष्ण के नेत्रों का मार्मिक अंकन किया है। इतना ही नहीं उसने राधा को जिस प्रकार क्रोधित मुद्रा में चित्रण किया है, वह कलाकार का अनूठा कलाचातुर्य ही है। पीछे के दृश्य में घाटी से झांकता सूर्य, प्रभात होने का बोध स्वतः देने लगा है। चित्र में सुन्दर छवियों के अतिरिक्त हरे, पीले, लाल, संतरी, जामुनी, हल्के नीले और सुनहरी रंगों ने विषय को चर्मोत्कर्ष की सीमा के आगे तक पहुंचा दिया है।

गर्वाभिसारिका

मण्ड़ी, लगभग 1800 ई.

चंदन चढ़ाइ चारु अंबर के उर हारु,
सुमन-सिंगार सौहे आनंद के कंद ज्यों।
वारौ कोरि रतिनाथ बीन में बजावै गाथ,
मृगज मराल साथ बानी जगबंद ज्यों।
चौंकि चौंकि चकई सी सौतिन की दूती चलीं,
सौतें भईं दीनी अरबिंद दुतिमंद ज्यों।
तिमिर बियोग भूले लोचन चकोर फूले,
आई ब्रजचंद चलि चंदावलि चंद ज्यों।

केशव राधा की छवि का वर्णन करते हुए कहते हैं कि वह शरीर पर अरगजा (चंदन) लेपन कर श्वेत परिधान में मोतियों और पुष्पों का हार पहने अपनी समता में अकेली दिखती है। उसकी सुन्दरता पर अनेक तरुणाई कलियां न्यौछावर हो रही हैं। उसकी सुकुमार्यता और सौंदर्य देख सौतें चकित हो चकई की भांति अपने प्रति दुःखित हो ठीक उसी प्रकार मुरझाने लगी हैं जैसे चन्द्रमा को देख खिले कमल बंद हो जाते हैं। वह यौवन की बाढ़ के उन्माद में अमिल-तडित सी नलिनी कृष्ण से मिलने आई है।

कांगड़ा शैली के इस चित्र में कृष्ण नवोढी राधा की गजगति पर विमोहित हो गए हैं। राधा के चन्द्रबदन की ज्योत्स्ना में शीतलता के अतिरिक्त मोदकारिता तथा मादकता ऐसी प्रतीत होती है मानो निष्कलंक चन्द्र क्षीरसागर से निकल कर आ गया हो। उसका सौन्दर्य और कृष्ण के समीप कुंजों की शोभा अप्रतिम है। इस प्रभावपूर्ण चित्र में कृष्ण रूपी चन्द्रमा के समीप चांदनी रूपी राधा स्वतः चली आ रही है। रंगों का सौम्य प्रभाव इस प्रकार लगता है मानो चांदनी छन-छन कर पृथ्वी पर पड़ रही हो।

राधा की मनुहार

कांगड़ा, लगभग 1800 ई.

मेरे मिलाएहीं पै मिलिहौ मनमोहन सों मन मोहि न दीजै।
मौनहि मौन बने न कछू अब क्यों मन मानद के रस भीजै।
ऐसेहीं केसव कैसें जियै अहो पान न खाहु तौ पान्यो न पीजै।
जानिहै कोऊ कहा करिहौ तब सोच न एतौ संकोच तौ कीजै।

सखी राधा से कह रही है कि हे राधा! मनमोहन पर इस प्रकार मोहित होकर मन देना उचित नहीं और न ही इस प्रकार चुप्पी साधने से ही काम चलेगा। मौन रहने से कहीं हृदय में प्रेमरस उत्पन्न हुआ है? यदि पान अच्छा नहीं लगता तो क्या पानी भी नहीं पियोगी। इस प्रकार खाना-पीना छोड़ने से कैसे जी सकोगी। मैं तुम्हें उस मनमोहन से मिला तो दूंगी, यदि कोई जान जायेगा तो क्या करोगी। मिलन में भय नहीं फिर भी संकोच का दिखावा तो करना ही होगा।

इस चित्र में मृगी (राधा) के खंजन में अपूर्व चान्चल्य दिखाया गया है किन्तु मर्यादा एवं लोक-लाजवश वह सखी की ओर देखने का साहस नहीं करती। इस विषम स्थिति में राधा की अवस्था ठीक वही हो गई है जो पिंजरबद्ध सारिका की होती है। राधा का रूप-लावण्य कांगड़ा कलम में लोचनामृत के समान लग रहा है। चित्र में सवैये के समस्त भाव स्पष्ट झलकते हैं।
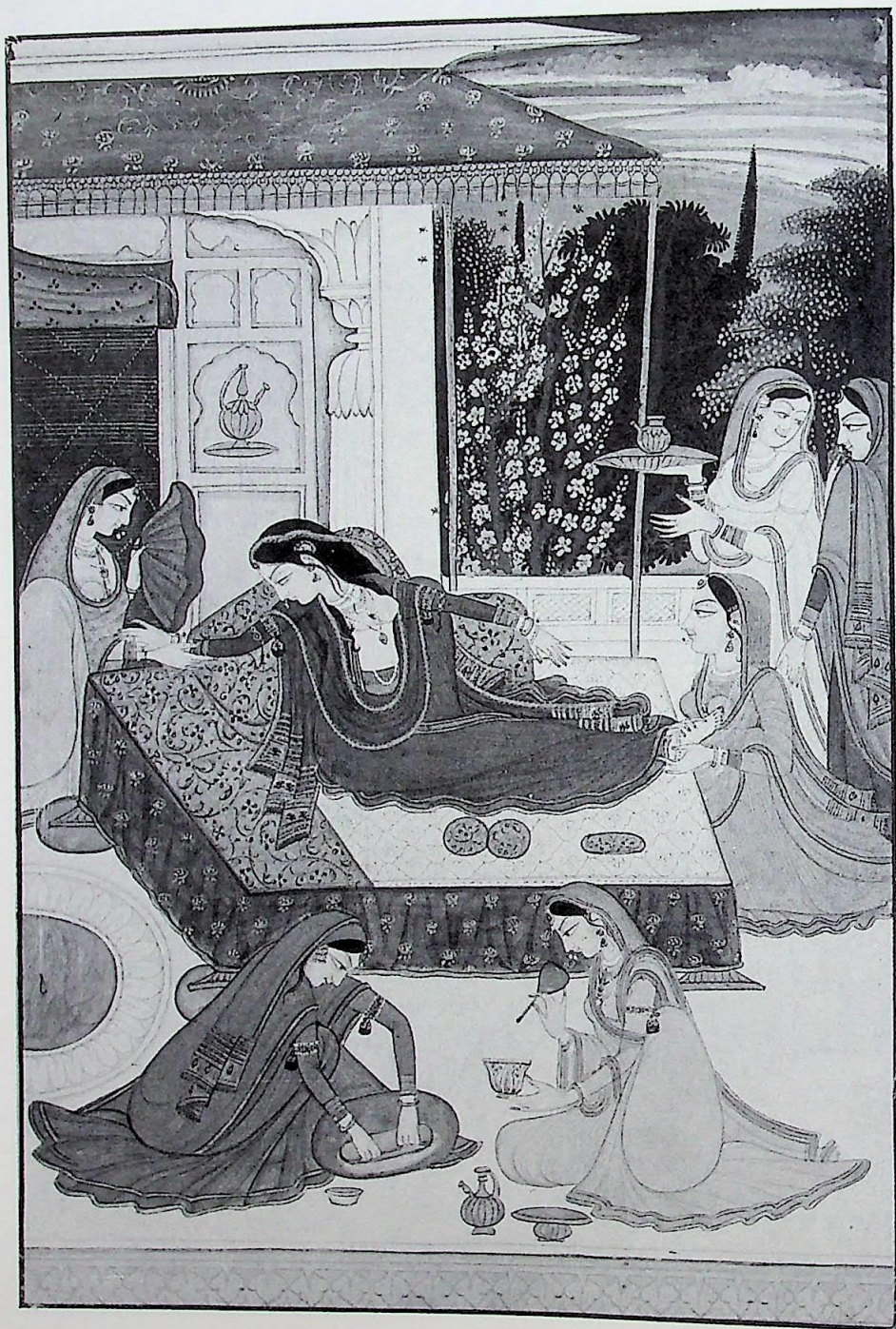
विरही राधा

कांगड़ा, लगभग 1800 ई.

केसव काल्हि बिलोकि भजी वह, आजु बिलोकें बिना सु मरै जू।
बासर बीस बिसे बिष मींडियै, राति जुन्हाई की ज्योति जरै जू।
पालिक तें भुव भूमि तें पालिक आलि करोरि कलालि करै जू।
भूषन देहु कछू ब्रजभूषण दूषन देह को हेरि हरै जू।

सखी कृष्ण से वर्णन कर रही है कि राधा आपको देखकर भाग तो गई पर इतने में ही आपकी अनुपम छटा उसके हृदय में ऐसी बस गई है कि वह अब तुम्हें बिन देखे मर जाएगी। दिन में तो वह सब प्रकार के विष में डूबी रहती है परन्तु रात्रि होते ही चांदनी के प्रकाश की शीतलता उसे और अधिक जलाने लगती है। रात्रि भर वह कभी पलंग से पृथ्वी पर और कभी पृथ्वी से पलंग पर कलांछे भरती रहती है। आप यदि अपने शरीर का कोई गहना उतार कर मुझे दे दें जिसे देख संभवतः वह अपनी तपन शांत कर सके।

चित्र में पलंग पर अर्धमूर्छित राधा को सखी कमल के पत्ते से हवा कर शीतलता प्रदान करते हुऐ अंकित है। दूसरी सखी पांव दबा रही है। तीसरी पेयजल लिए खड़ी है। अन्य सखियां कुछ मात्रा-सी पीसने-पिलाने की तैयारी में हैं। विरह-व्यथा के इस सजीव चित्र में कांगड़ा शैली के कलाकार ने राधा के सौन्दर्य और कोमलता को अधिक महत्त्व प्रदान किया गया है।
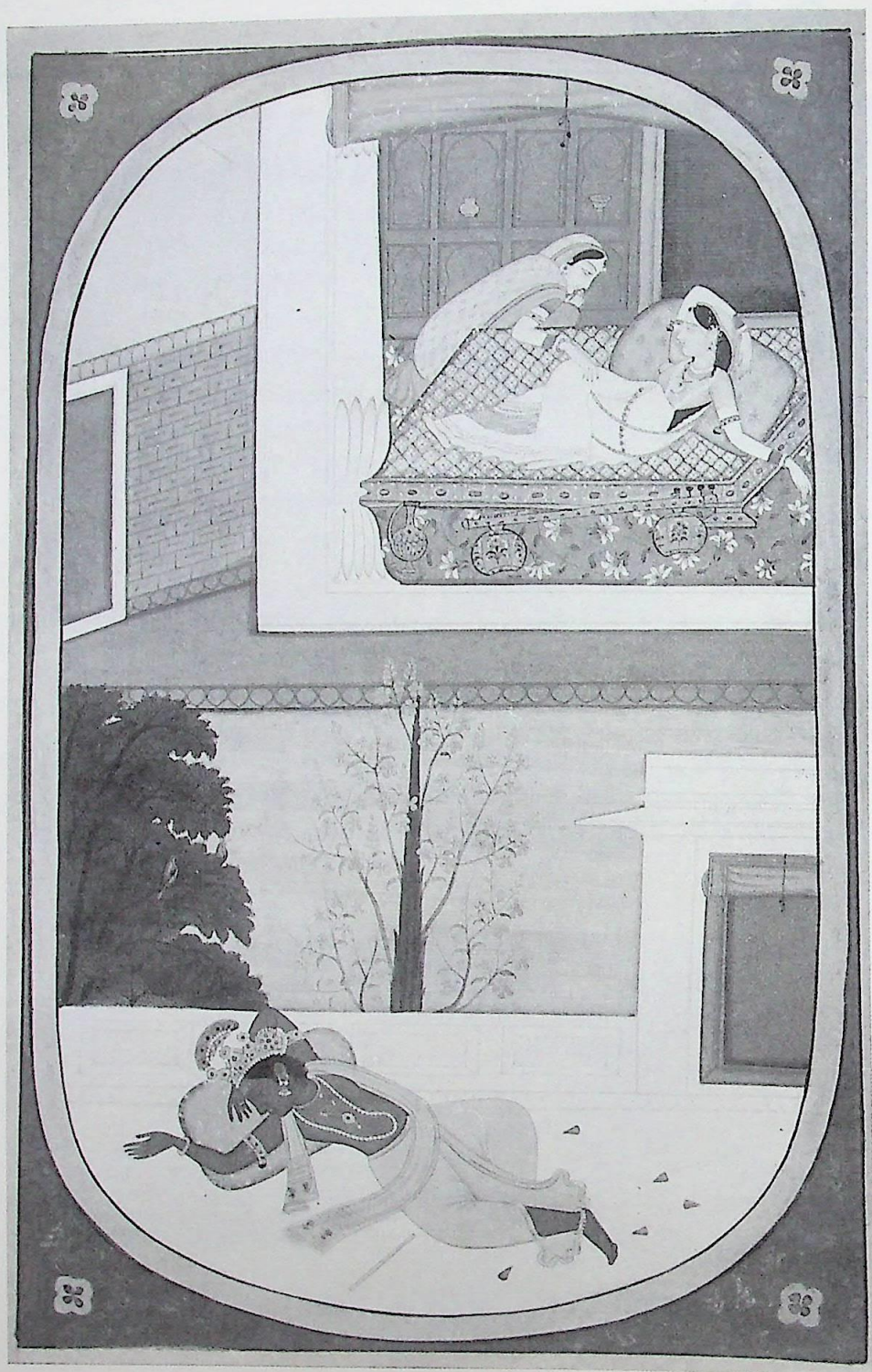
राधा की प्रच्छन्न व्याधि

कांगड़ा, लगभग 1800 ई.

बेंनु तज्यों उनि,बैन तें बोलौ न बोल, बिलोकत बुद्धि भगी है।
वे न सुनें समुझै तूँ न बातहि प्रेम लग्यो किधौं प्रीति जगी है।
केसव वे तुहि तोहि रटैं रट तोहि इतै उनहीं की लगी है।
वे भखैं पान न, पान्यौ न तूँ सुतैं कान्ह ठगे कि तूँ कान्ह ठगी है।

सखी राधा से कह रही है कि आजकल कृष्ण ने बंसी बजाना छोड़ दिया है और तुमने भी चुप्पी साध रखी है। तुम दोनों की परिस्थिति देख बुद्धि दुविधा में पड़ गई है कि दोनों को क्या हो गया है। न तो कृष्ण ही किसी की सुनते हैं और न तू ही किसी की बात मानती है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे तुम दोनों को किसी प्रेत ने वशीभूत कर लिया हो। क्योंकि कृष्ण अब केवल तेरे ही नाम की रट लगा रहे हैं और इसी प्रकार तू भी उन्हीं की ही रट लगा रही है। जिस प्रकार उन्होंने ताम्बूल खाना छोड़ दिया है, उसी प्रकार तूने भी जलपान छोड़ दिया है। यह देख अनुमान लगाना कठिन हो गया है कि तूने कृष्ण को ठग लिया है अथवा कृष्ण ने तुझ को।

चित्रकार ने अपने रंग-चातुर्य से चित्र को सराबोर कर दिया है। उसने इसको दो भागों में विभक्त कर उपरोक्त सवैये को अंकित किया है। ऊपरी भाग में राधा को अट्टालिका के एक शयन कक्ष में शैय्या पर तकिये का सहारा लिये चिन्तामग्न परिस्थिति में अंकित किया है। पास में खड़ी सखी उसे कृष्ण की मनोदशा सुनाती प्रतीत होती है। दूसरे दृश्य में नीचे कृष्ण बंसी का परित्याग कर बिना बिछौने के तकिये के सहारे विक्षिप्त अवस्था में लेटे हैं।

चित्र देखने से प्रतीत होता है जैसे ऊपरी कक्ष में चन्द्र थकित हो गया हो और नीचे के कक्ष में काम ने लीक खींच दी हो। ऊपर सखी यही समझाने के प्रयास में है कि रस में क्रोध कैसा। तूने तो जलपान त्याग मौन-सा धारण कर लिया है। तू कृष्ण की रसाकुलता को क्या समझे। कृष्ण तो मक्खन से मृदु और मैंन से मृदुतर हैं।

॥अथप्रोढाधीराआकृतिगुप्ता॥ ॥सवईया॥

प्रौढ़ा धीरा नायिका

बून्दी, लगभग 1700 ई.

हित कै इत देखहु देख्यो सबै हित-बात सुनौ जु सुनी सब ही हैं।
यह तौ कुछ और बहै सब ही अरु सौंह करौ ब करी जु तही हैं।
समुझाई कहौं समुझी सब केसव झूठी सबै हमसों जु कही हैं।
मान कियो अपमान करौ तो हँसौ अब कै हँसिबे कों रही हैं।

श्रीकृष्ण मानिनी राधा से अपनी ओर देखने का आग्रह कर रहे हैं परन्तु राधा है कि उधर देखती ही नहीं। उससे प्रेम की बातें सुनने को कहा तो कहती है "मैने सब देख लिया और सुन लिया"। फिर श्रीकृष्ण राधा से उनके रुष्ट होने का कारण पूछते हैं तब राधा कहती है कि आप मेरी सौगंध खाकर सच सच बताओ कि सौत के घर जाकर आपने क्या क्या कर्म किये? कृष्ण के कहने पर कि उन्होंने तो सब कुछ बखान कर दिया तो राधा कहती है कि यह सब मिथ्या है। कृष्ण के कहने पर कि तुमको अभिमान हो गया है, तभी तुम मेरी बात सुनने और मानने को तैयार नहीं। यदि मेरा कथन सत्य नहीं तो अब की बार हंस के दिखाओ। तिसपर राधा ने उसी स्वर में कहा कि वह नहीं हंसेगी।

बूंदी शैली के इस मनोहर चित्र में कृष्ण का सारा बुद्धि कौशल परास्त हो गया है। वस्तुतः राधा का सौंदर्य कल्पना से भी परे है। यहीं आकर कृष्ण की चिरचंचलता स्थिर हो जाती है। चित्र में राधा के सौन्दर्य बोध को ऐसे धरातल पर प्रतिष्ठित कर दिया है कि चित्र स्वतः उपरोक्त सवैये के भाव कहने में समर्थ है। दीवालों पर प्रज्वलित दीप, एकान्त और निस्तब्ध वातावरण रात्रि का बोध कराता है जिसमें राधा बिछौने के समीप मुस्कान भरी मुद्रा में एक ओर मुख किये रूठने का अभिनय कर रही है और कृष्ण अपनी युक्तियों से उसे मनाने में प्रयासरत हैं। त्रिपुर-सुन्दरी राधा सौन्दर्य रूप में अनुवर्तित हुई सी देखी जा सकती है। राधा के नैसर्गिक रूप और विषयगत स्थितियों का अंकन करने का कलाकार ने सफल प्रयास किया है। उसके द्वारा आकाश में चित्रित पक्षी भी अपने आगे वाले पक्षी को उसी प्रकार समझाने का प्रयास कर रहा है जैसे भोली राधा का चंचल कृष्ण मनुहार कर रहे हैं।
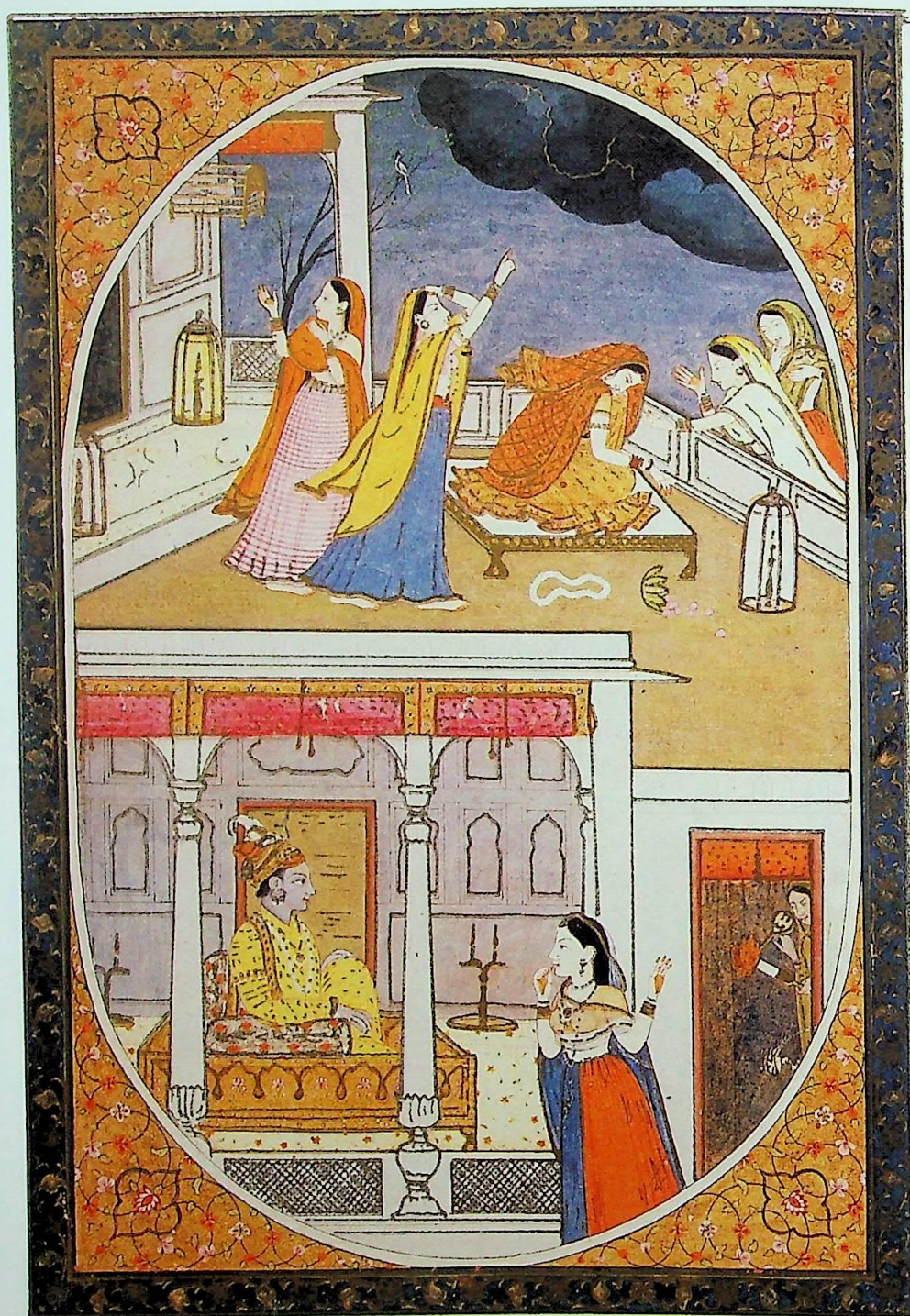
मानिनी राधा

कांगडा, लगभग 1795 ई.

सिखै हारी सखी डरपाइ हारी कादंबिनी,
दामिनी दिखाइ हारी दिसि अधरात की।
झुकि झुकि हारी रति मारि मारि हारयो मार,
हारी झकझोरति त्रिबिध गति बात की।
दई निरदई दई याहि काहे ऐसी मति,
जारति जु रैनदिन दाह ऐसे गात की।
कैसेंहूँ न माने हौं मनाइ हारी केसौराय,
बोलि हारी कोकिला बुलाई हारी चातकी।

सखी कृष्ण से कह रही है कि हे कृष्ण! यदि अब आप स्वतः चलकर राधा को मनाएं तो वह संभवतः मान जाए। सखियां तो मना-मना कर हार बैठी हैं। मेघों से छाई घटाएं और अर्धरात्रि में दमकती बिजुरी भी उसे नहीं डरा सकी। कोयल भी कूक-कूक कर शांत हो गई है। चातक की पी-पी भी उसे बुलाने में असफल हो गई है। रति और कामदेव के प्रयास भी असफल हो चुके हैं। न जाने तुमने उसे कैसी बुद्धि दी है कि वह दिन-रात अपने सुकुमार और कोमल शरीर को जलाती रहती है।

कांगड़ा शैली के इस अभिजात चित्र में मानिनी राधा के भाव और वातावरण की औपचारिकता को पूरी तरह से उभारा गया है। उसके समस्त श्रृंगार अस्त-व्यस्त हैं। श्रीकृष्ण भी तदनुकूल स्थिति देख निचले खण्ड में सखी का सन्देश उत्सुक होकर सुनने में लीन है। कृष्ण को राजसी परिधान में अंकित किया गया है। सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर आभास होता है कि पगड़ी कांगड़ा के राजा संसारचंद की-सी ही है। उल्लेखनीय है कि पहाड़ी क्षेत्र की सर्वाधिक परिष्कृत चित्र-शाखा, कांगड़ा के चित्र अपने सौंदर्य के लिए विख्यात हैं।

दसम
१६
॥अथमिलिपिनीकोबचनश्रीक्रिस्नजूसों॥सवईया॥ ॥षांटतुरीजिमिषूं दुरहोग
हिगैरकुगैरहिंजानिनजाहूं॥लाजनआवतीमारैसनाजनलागैअलोक केताज
नेताहूं॥कोरिबिचारबिचारकुकेसवदेषकुहूफिहितसबकाहूं॥ने हहीकें
फिरिलागकुसंगननैननिकोसंगुओरनिबाकु॥२२३॥ ॥
२२५

शिल्पिनी द्वारा कृष्ण को ताड़ना

बून्दी, लगभग 1700 ई.

खोट तुरी जिमि खूँट रहौ गहि ठौर कुठौरनि जानिहू जाहू।
लाज न आवति मारे समाजन लागें के अलोक ताजन ताहू।
कोरि बिचार बिचारहु केसव देखहु बूझि हितू सब काहू।
नेह ही के फिरि लागिहौ संग न नैननि के सँग और निबाहू।

शिल्पिनी श्रीकृष्ण से कहती है कि आप एक चंचल अश्व की भांति जिधर मुँह किया, उधर ही सीधे चले जाते हो। ठौर कुठौर जानते हुए भी संकोच नहीं करते। समाज में बदनाम हो जाने पर भी आपको लज्जा नहीं आती। आप हर संभव विचार लीजिए अथवा अपने हितैषियों से परामर्श कर लीजिए कि आपने जो बेलगाम नेत्र छोड़ रखें हैं, वे ठीक हैं या नहीं। केवल शुद्ध प्रेम से ही आपकी प्रतिष्ठा बनेगी।

रसिकप्रिया पर आधारित बून्दी कलम की यह सुन्दर कृतियों में से एक है जिसमें शिल्पिनी कृष्ण का संदेश लेकर राधा के पास जा रही है। ऊपर अट्टालिका के छज्जे में वह राधा को कृष्ण का संदेश कुछ मिला-जुला कर दे रही है जिससे उसके हृदय में कृष्ण के प्रति प्रेमांकुर उत्पन्न हों। परन्तु वह कृष्ण को भी सचेत करती है कि तुम तो अनेकों से नेत्र मिलाते फिरते हो, उससे तृप्ति नहीं होगी। ओस चाटने से प्यास नहीं बुझती, वह प्यास तो प्रेम से ही बुझ सकती है। अट्टालिका के नीचे कृष्ण एक अन्य गोपी से छेड़छाड करते अंकित हैं जिन्हें पास खड़ी सखी आश्चर्यपूर्ण नेत्रों से देख रही है। चित्र के एक अन्य दृष्य में कृष्ण अपने घर के चबूतरे पर आसीन हैं जहां कुछ ग्रामीण भी बैठे हैं, जो उन्हें उनके असह्य चलन के लिये लज्जित करने आए हैं। अभी एक और ग्रामीण अश्व से उतर ही रहा है जो अन्य ग्रामीणों की भांति उन्हें खरी-खोटी सुनाने आया है। चित्रकार ने अश्व का अंकन विशेषकर कृष्ण की अश्व जैसी चंचलता को व्यक्त करने के उद्देश्य से किया है।

उल्लेखनीय है कि बूंदी के चित्रकार चित्र के ऊपरी भाग में रसिकप्रिया का दोहा अंकित कर उसका चित्रण करते थे। वास्तुशिल्प की दृष्टि से भी यहां के कलाकारों ने भवनों को सुन्दर आकृति प्रदान की है। इस चित्र में विषयगत छवियों के अंकन से चित्र में उत्पन्न गति चित्रकारिता की एक विशेष उपलब्धि है। दृश्यगत चित्रण ग्रामीण वातावरण के अनुकूल हुआ है जिसमें विविध रंगों के प्रयोग से चित्र-दृश्य मनोरम हो गया है।

उत्सव का मिलन

कोटा, लगभग 1770 ई.

केसौदास घर घर नाचत फिरत गोप,
एक परे छकि ते मरेई गुनियत है ।
बारुनी के बस बलदाऊ भए सखा सब,
संग लै को जैये दुख सीस धुनियत है ।
मोंहि तौ गए हीं बनै दीह दीपमाला पाइ,
गाइनि सँवारिबे को चित्त चुनियत है ।
जै न बसौं लोलिनैनि लेरुवा मरहिं सब,
खरिक खरेई आज सूने सुनियत है ।

दीपावली के दिन कृष्ण राधा के समीप बैठे कह रहे हैं कि आज समस्त ग्वाल बाल घर घर नाचते नाचते नशे में बेसुध हो गऐ हैं । अब मैं अन्य किसे भेजूं जो गायों को एकत्रित कर सके और गोशाला में बछड़ों की देख भाल कर सके । इस अवस्था में मुझे ही उनकी देख रेख हेतु शीघ्र जाना होगा । इसलिए इस शुभ दीपावली के अवसर पर तुमसे मैं केवल मिलने आया हूँ। परन्तु पुलकित राधा उनसे रुकने का आग्रह कर रही है जो उसके विलास बिम्ब से उजागर हो रहा है । राधा-कृष्ण की वार्ता सुन नीचे सोपान के समीप खड़ी दो सखियां कृष्ण के निर्णय की उत्सुक्ता से प्रतीक्षा कर रहीं हैं जिन्हें कृष्ण का राधा के कक्ष में गुप्त रूप से प्रवेश करने का बोध हो चुका है ।

भवन के विभिन्न खण्ड़ों में क्रम से रखे दीपों के उजाले से समस्त भवन जगमगा उठा है । प्रथम खण्ड़ में खड़ी गोपियां आतिशबाजी और फुलझड़ियां चला रही हैं जो आकाश में छिटक छिटक कर चमक रही है । दोनों सखियां इस मनोविनोद में इतनी तन्मय हैं कि उन्हें पता ही नहीं कि कब कृष्ण राधा के कक्ष में प्रवेश कर गए । घर के बाहर ऊँचाई पर टंगे कागज के आकाश दीपों का प्रकाश छन छन कर चारों ओर बिखर रहा है । नीचे आंगन में एक अन्य सखी अनार चला कर मुदित हो रही है । उसी के समीप एक और अन्य सखी दीप प्रज्वलित कर क्रम से रखने में व्यस्त है ।
कोटा शैली के चितेरे ने दीपावली का उसकी भूमिका के अनुरूप ही चित्रण किया है । भवन में दीपमाला इस पर्व के अनुरूप हुई लगती है । सखियों को विभिन्न रंग के परिधानों में अंकित कर चित्रकार इस दृश्य में गति उत्पन्न करने में सफल हुआ प्रतीत होता है ।
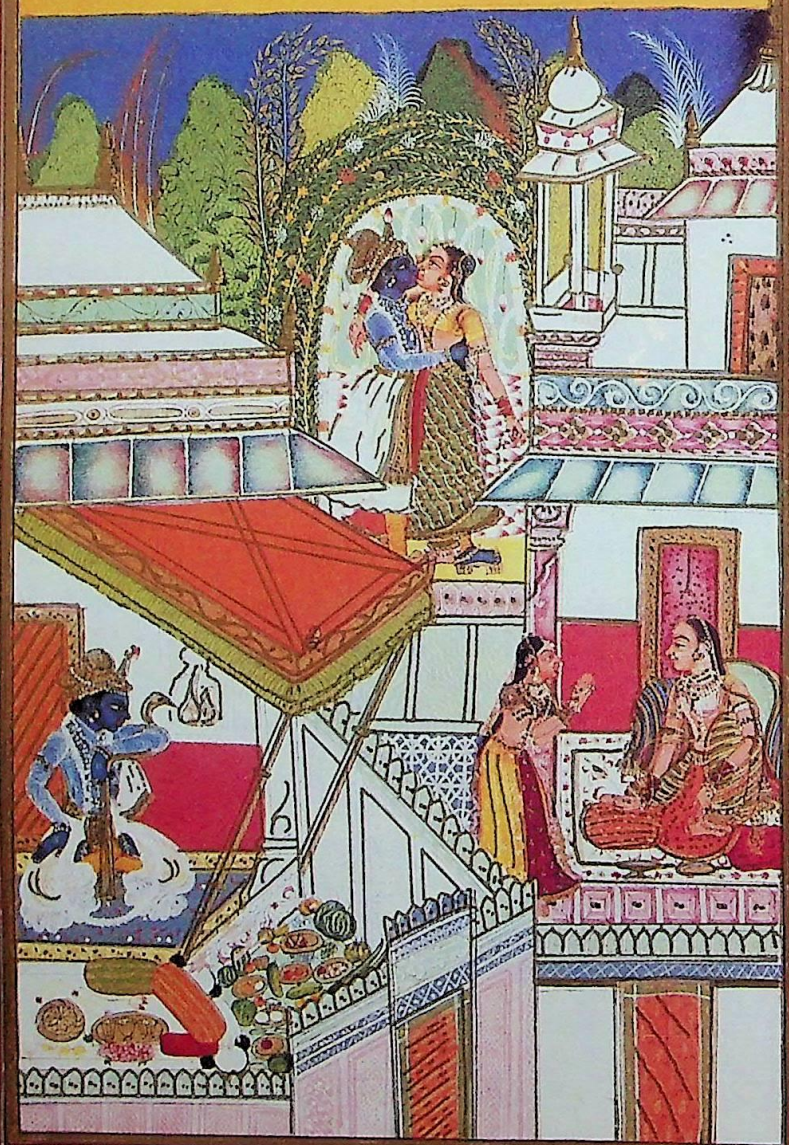
कृष्ण की व्यग्रता

बून्दी, लगभग 1700 ई.

खारिक खात न दारयौंइ दाख न माखनहूँ सहुँ मेटी इठाई।
केसव ऊख महूखहु दूखत आई हौं तो पहँ छांडि जिठाई।
तो रदनच्छद को रस रंचक चाखि गए करि केहुँ ढिठाई।
ता दिन तें उन राखी उठाई समेत सुधा वसुधा की मिठाई।

सखी राधा से कह रही है कि हे राधा! दाव लगाकर कृष्ण ने जब से तेरे अधरों का रसपान किया है, तब से उन्हें छुहारे, अनार और अंगूर की मिठास भाती ही नहीं। उनको नेनूं (मख्खन) तक खाने की चाह नहीं रही। उन्हें अब गन्ने और शहद का स्वाद भी कड़वा लगने लगा है। कृष्ण ने तो उसी दिन से पृथ्वी पर उपलब्ध सभी मिष्ठानों का परित्याग कर दिया था जिस दिन से उन्होंने तुम्हारे अधरों का पान किया। प्रत्येक सुधा-बसुधा का भी उन्होंने परित्याग कर दिया है। मैं तुझसे बड़ी होने के नाते तुझे समझाने आई हूं कि अपने बड़प्पन पर गर्व न कर और यह विरोधाभास छोड़, उनसे शीघ्रातिशीघ्र मिल।

बून्दी के चितेरे ने एक ही चित्र में तीन झाकियां प्रस्तुत कर दोहे का भावार्थ व्यक्त किया है। प्रथम निकुंज में कृष्ण राधा के मधुर अधरों का रसपान इस प्रकार कर रहे है, मानों मधुमाता रस-पिपासु मधुप किसी पुष्प के पराग का पान कर रहा हो। उन्होंने अपना एक हाथ कनक-तन पर मुस्कुराते करिणी के नितम्भों के नीचे मृगराज-सी कटि पर रख दिया है। दूसरे दृश्य में अट्टालिका के एक कक्ष में सखी बसंत की पंचमी राधा से मकरध्वज (कृष्ण) की मानसिक परिस्थिति का वर्णन कर रही है कि तेरे सुन्दर अधरों के रसपान से काम-स्फूर्त कृष्ण को केवल तेरे केलि-रसपान करने की ही लालसा रह गई है। तीसरे दृष्य में कृष्ण के सम्मुख अनेक मिष्ठान-व्यंजन रखे हैं पर उन्हें इनका कोई आकर्षण नहीं। इस चित्र में एक विशेषता यह है कि अधर-चुम्बन, भारतीय संस्कृति में प्रचलित न होते हुए भी चित्रित किया गया है। विविध रंगों ने चित्र का आकर्षण द्विगुणित कर दिया है।

॥अथप्रौढाधीराधीरा॥ ॥सवईया॥ ॥कैमनमेलोनजौलौंकछुअबछाडिहोबोलिबोबोलिहैंसोंहै
केसवऔरनसोंरसरासरस्पोरखुवादसबैहमसोंहै।देषजधोंएकबारसकोचनिआरसलोचनआ
रसीसोंहै।आऐहोवेसैहिमाजसोंआजुसुन्नलिगएपियकाह्लिकीसोंहै॥ ॥४८॥ ॥
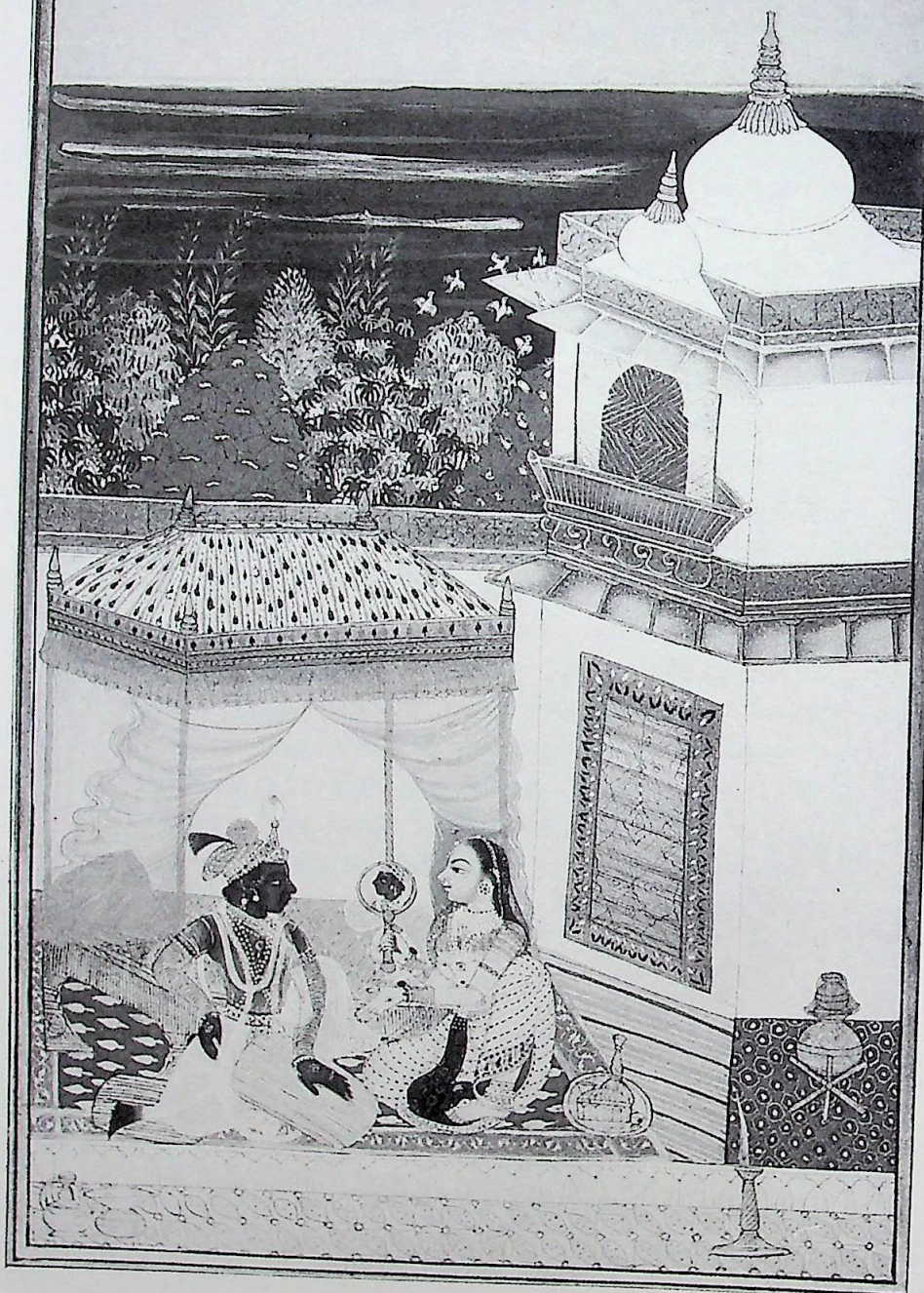
राधा का उलाहना

बून्दी, लगभग 1700 ई.

हो मन मैलो न जौ लौं कछू अब छाड़हु बोलिबो बोल हंसौं हैं।
केसव औरनि सों रसरासि रस्यो रसबाद सबे हम सौं हैं।
देखहु धौं इक बार सँकोचनि आरस-लोचन आरसी सौं हैं।
आए जू वैसेई साज सौं आजु सु भूलि गई पिय काल्हि की सौं हैं।

राधा प्रातःकाल रतिरस-चिन्हों से लांछित रसिक शिरोमणि को देखकर समझ जाती हैं कि वे कहीं पर रात बिता कर आ रहे हैं। राधा दुःखी हो नट नागर से कह रहीं हैं कि हे प्रिय, लगता है आप कल की शपथें भूल गए हैं कारण आज भी आपकी वेशभूषा वैसी ही है। आपके प्रति मेरा मन तब तक उदास रहेगा जब तक आप हंसी-ठट्ठा करने की आदत नहीं छोड़ देते। आप सौतों से तो आनन्दपूर्ण बातें करते हैं, केवल ये सारे झगड़े मुझसे ही होते हैं। आप एक बार अपने संकोचपूर्ण एवं अलसाये नेत्रों को दर्पण में देख आईये फिर मुझसे बातें कीजिए। अलसित नेत्रों से रात्रि जागरण की गवाही आपके मुखारबिन्द से स्पष्ट झलक रही है।

जिस प्रकार पहाड़ी कला में कांगड़ा शैली का स्थान है, संभवतः माधुर्य और नियोजन में बून्दी शैली का भी वही स्थान राजस्थान चित्र शैलियों में है। दुबली-पतली काया, लम्बे केश और झीने पारदर्शी वस्त्र, कृष्ण के मोरपंखी किरीट के स्थान पर मुग़लिया पगड़ी पर हल्के जामुनी रंग के कमल का अंकन अति महत्वपूर्ण है। चित्र में बून्दी की अट्टालिकाओं का अंकन भी स्थापत्य की दृष्टि से कम महत्वपूर्ण नहीं जिनमें छज्जों का अंकन संचरणशील हुआ है।

कलाकार ने विभिन्न हल्के और गहरे चटकीले रंगों से इस चित्र के चित्रण में सामंजस्य स्थापित किया है। बून्दी परिधान में अंकित अभिनव राधा के गले में मोतियों की माला बहुत ही सुहानी लग रही है परन्तु कृष्ण के प्रति चढ़े उसके तेवर और एक हाथ से आरसी दिखा कर वह उन्हें अपने किये पर लज्जित करने के प्रयास में चित्रित की गई है। इस प्रयास से कलाकार की सफलता इस कृति में मुखरित हुई है। जिस प्रकार काव्य में अलंकार, अर्थ, ध्वनि, छन्द आदि की विशेषताएं होती हैं, उन्हीं पदचिन्हों पर बून्दी के चितेरों ने चित्रों को विधिवत सजाने का प्रयास किया है।
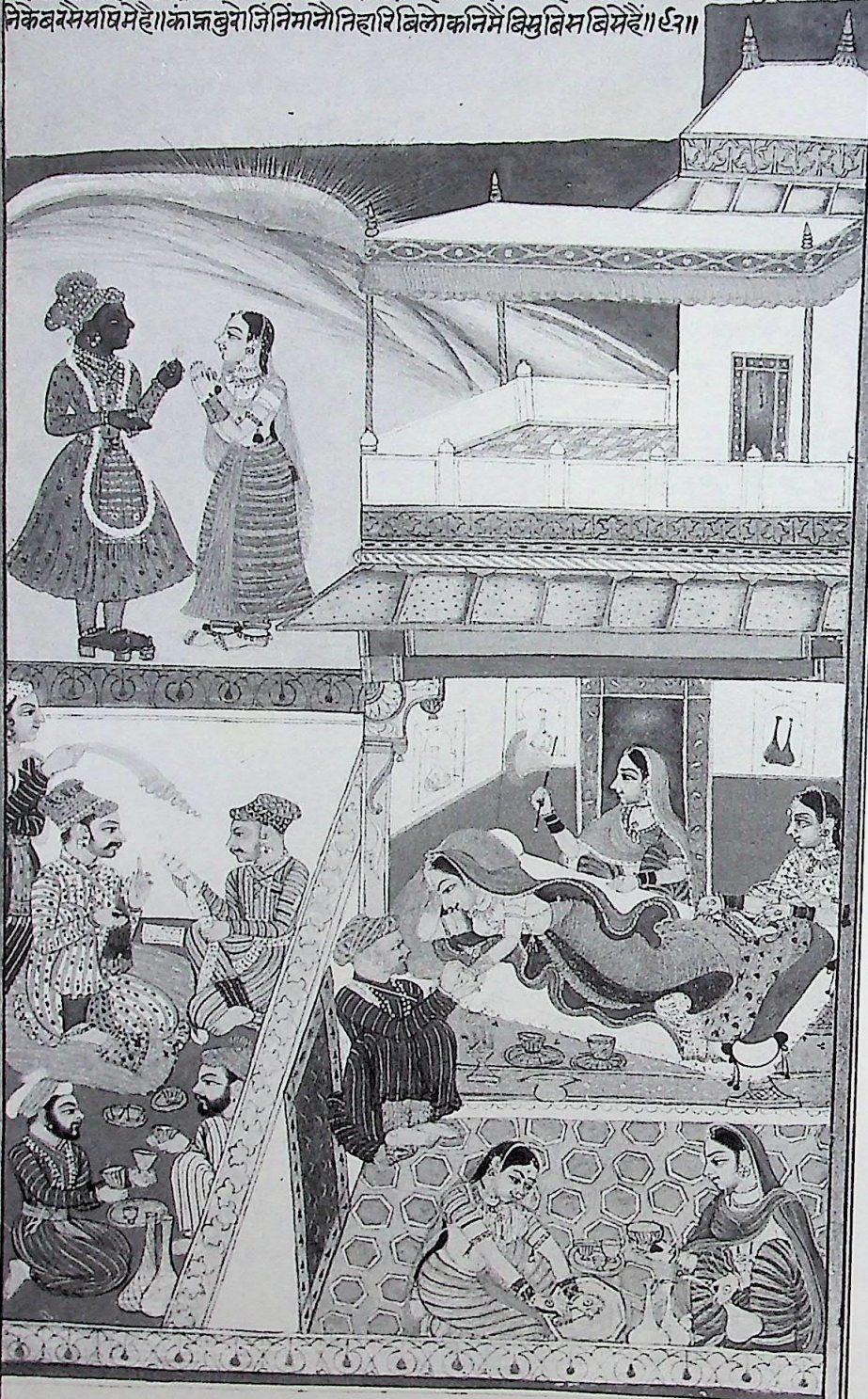
सखी का कृष्ण को उलाहना

बून्दी, लगभग 1700 ई.

काल्हि की ग्वालि तो आजहू लौं न संभारति केसव कैसेहूँ देहै ।
सीरी ह्वै जाति, उठै कबहूँ जरि जीब रह्यो कै रही रुचि-रेहै ।
कोरि बिचार बिचारति है उपचारनि के बरसैं सखि मेहै ।
कान्ह बुरौ जिन मानौ तिहारी बिलोकनि में बिस बीस बिसै है ।

सखी कृष्ण को उलाहना दे रही है कि हे कृष्ण! कल जिस गोपी (राधा) का आपने अपने नयन-सेन से चित्त चुराया था, उसका सारा तन डोल गया और वह आज तक अपने शरीर को किसी भी प्रकार से संभाल नहीं पाई है। तुमने उसके तन-मन की गति पंगु कर दी है। कभी वह ठंडी पड़ जाती है तो कभी जल उठती है। पता नहीं चलता कि उसके शरीर में प्राण हैं भी अथवा केवल कांति की रेखा मात्र ही रह गई है (प्राण उड़ गए हैं) सखियों ने उसके अनेकों उपचार किए, परन्तु उसकी मूर्छा भंग नहीं हुई। बुरा मत मानिए, मुझे लगता है आपकी गूढ़ चितवन में बीसों बिस्वा विष (चार सौ गुना विष) भरा हुआ है, अन्यथा ऐसा क्यों होता ।

बून्दी के इस चित्र में तीन झांकियां प्रस्तुत की गई हैं। प्रमुख दृश्य में सलज्ज सुरग राधा शैय्या पर अचेत अवस्था में लेटी है। उसकी वेणी खुली पड़ी है मानो शरीर रूपी इंदु के मयपान के लिए यहां भी सर्प (स्नेह) उड़ कर आ गया हो। एक सखी पंखे से हवा कर रही है तो दूसरी उसके पांवों में चंदन आदि का लेप कर रही है। सम्मुख खड़ा वैद्य उसकी नाड़ी परखने में विचारमग्न है। आंगन में एक ओर बैठी दो सखियां औषधियां घोटने-छानने में व्यस्त हैं। सदन के बाहरी भाग में चिन्तित बृषभान (राधा के पिता) ज्योतिषी से राधा की जन्म कुण्डली दिखला कर उस की आयु और स्वास्थ्य के विषय में ग्रहों की शांति आदि की चर्चा में व्यस्त हैं। समीप ही राधा के स्वास्थ्य के विषय में जानकारी लेने पधारे वृषभान के मित्रगण भी बैठे जलपान कर रहें हैं। ऊपर एक हाथ में पुष्प लिये रसकामी कृष्ण करबद्ध सखी से वार्तारत हैं जो यह कहती प्रतीत होती है कि राधा का तो तुमने यह हाल किया है, अब मुझे तो क्षमा करो।

वास्तव में चंचल-चपल चारु-चिंतामणि के प्रेमासक्त नेत्र यौवन मदमाती राधा के कुचों के बीच मृगमद हो चुके हैं जिनकी आह्लादकारिता ने राधा को प्रेमावर्त कर दिया है। जब तक राधा की स्थिति यही रहेगी, उसकी सम्मोहनता भंग नहीं होगी। उसकी इस तन्मयता का कोई वैद्य अथवा ज्योतिषी उपचार नहीं कर सकता ।

॥अथश्रीराधिकाजूकीप्रछन्नचेष्टा॥सवईया॥ ॥चोरिचोरि चित चितवति मुह मोरि मोरि काहे तें हंसनि दिऐं दरसुव
ढायो है॥ केसो रायकी सों तुं जन्हां तिकहा बार बार बीराधाजू मेरी बीर आर सुजों आयो है॥
आजुपायो है॥६४॥ ॥

राधा की प्रच्छन्न चेष्टा

बून्दी, लगभग 1700 ई.

चोरि चोरि चित चितवति मुँह मोरि मोरि,
काहें तें हँसति हियें हरष बढ़ायो है।
केसौदास की सौं तूँ जँभाति कहा बार बार,
बीरी खाइ मेरी बीर आरस जौ आयो है।
एँड़ सों एँड़ाति अति अंचल उड़ात, उर
उघरि उघरि जात गात छबि छायो है।
फूलि फूलि भेंटति रहति उर झूलि झूलि,
भूलि भूलि कहति कछू तैं आज खायो है।

सखी राधा से कह रही है कि तू मुझसे अपने चंचल नयन चुरा कर और मुख मोड़ कर क्या देखती है? इस प्रकार किस लिए हंस रही है? तू आज इतनी हर्षित क्यों है? तुझे सौगंध है, सच-सच बता, तुझे अंगड़ाई क्यों आ रही है? यदि तुझे इतना आलस्य आ रहा है तो तू ताम्बूल खा ले। आज तू प्रसन्न और इठलाई-सी अपनी देह को इतना तोड़-मरोड़ रही है कि तेरे स्तनों से आंचल भी सरक-सरक जाता है जिससे तेरा शरीर और कनक गिरी (स्तन) स्पष्ट दिखाई देने लगे हैं। तू गद्-गद् हो हृदय में आलिंगन करने लगती है और बातें भी तू भूली-भूली सी कर रही है, सच बता आज तूने मधुप-पान अथवा कुछ खा तो नहीं लिया।

इस चित्र में सुरम्य उद्यान के सम्मुख दृश्य भव्य प्रासाद का है जिसमें तनी चांदनी के नीचे आनन्द प्राप्ति के पश्चात नवीन वस्त्रों में अलमस्त राधा आसन पर इस प्रकार बैठी है मानो उसका मकरन्द दिग-दिगान्तर तक फैल रहा हो। उसकी अंगड़ाई लेने से उसका अंग-प्रत्यंग अलंकृत हो उठा है और उसके ऊरूयुग्म मदन मल्ल से व्यायाम करने लगे हैं जिनसे यह स्पष्ट हो गया है कि उसने प्रेमक्षुधा पी रखी है। कामदेव की विजय वल्ली-सी फूली वह इतनी प्रसन्न है कि उसे अपने तन-मन की सुध ही नहीं। समीप चार सखियां भी खड़ी हैं। एक हाथ से पंखा कर रही है तो दूसरी चंदन की धूनी से वातावरण को सुरभित कर रही है। तीसरी कुछ पेय सामग्री थामे है तो चौथी उसके अति निकट हो ताली बजा-बजा कर राधा को सचेत करने में प्रयत्नशील है।

कलाकार ने कवि के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों का इस चित्र प्रस्तुतिकरण में सफलतम प्रयास किया है। वातावरण को मोहक बनाने की दृष्टि से दृश्य में फुहारों का अंकन कर प्रासाद की भव्यता को और मनोरम बना दिया है।

राधिका का मदहाव

बून्दी, लगभग 1700 ई.

छबि सों छबीली बृषभानु की कुँवरि आजु,
रही हुती रूपमद मानमद छकिकै ।
मारहू तें सुकुमार नंद के कुमार ताहि,
आए री मनावन सयान सब ताकिकै ।
हँसि हँसि सौंहैं करि करि पाँय परि परि,
केसौराय की सौं जब हारे जिय जकिकै ।
ताही समै उठे घन घोरि-घोरि दामिनी सी,
लागी लौटी स्याम घन उर सौं लपकिकै ।

सखी दूसरी सखी से कह रही है कि हे सखी! शोभायुक्त बृषभान की पुत्री, गौरांगी राधा आज सौन्दर्य और मान के मद में छकी बैठी हैं । काम से भी सुकुमार छबीले कृष्ण ने उन्हें मनाने के लिए सब प्रकार के प्रेम के चातुर्य का प्रयोग किया । वे हँस-हँस कर शपथ लेते, बार-बार उसके पैरों में पड़कर उन्होंने अनेक उपाय किये और अंत में थक कर हार मान गए । इस पर भी राधा का मान भंग न हुआ । तभी एकाएक काले मेघ जोर-जोर से गर्जन करने लगे । तब राधा उलटे ही लपक कर बिजली की भांति घनश्याम के हृदय से जा लगीं ।

केशव के इस कवित्त का बूंदी के कलाकार ने सटीक चित्रण किया है । मान का प्रेम-व्यापार में क्या महत्व ? यही एक सखी उन्हें देख दूसरी सखी से स्पष्ट कर रही है, जैसे तीव्र आतप (रौद्र) के पश्चात् शीतल छाया सुखद होती है, उसी प्रकार मान से उत्पन्न क्षणिक विरह के बाद प्रिय मिलन सुहावना लगता है । बूंदी के चित्रों में प्रायः विरहोत्कंठा राधा के रूप को ही अधिक प्रकाशित किया गया है । इन चित्रों में हवेलियों पर मंडित छतरियों के ऊपर पीली पट्टी पर लिखे केशव के दोहे को साकार कर कलाकार ने चिंतनशक्ति का परिचय दिया है । मेघों के वेग को हल्के नीले, स्लेटी और सफेद रंग से अंकित कर चित्र में गति प्रदान की गई है । सौन्दर्य तत्व या कलात्मक बोध के क्षेत्र में बूंदी की चित्रकला ने अपना स्वतंत्र स्थान बनाया है ।

वासक सज्जा नायिका

बून्दी, लगभग 1700 ई.

चंदन बिटप बपु कोमल अमल दल,
कलित, ललित लता लपटी लवंग की।
कैसोदास तामें दुरी दीप की सिखा सी दौरि,
दुरवति नीलबास दुति अंग अंग की।
पौन पानी पंछी पसु बस सब्द जित जित,
होइ तित तित चौंकि चाहै चोप संग की।
नंदलाल-आगम बिलोकें कुंजजाल बाल,
लीनी गति तेहीं काल पंजर-पंतग की।

एक सखी दूसरी से कह रही है कि हे सखी! जहां चंदन के वृक्षों पर कोमल और स्वच्छ पत्तों से युक्त लवंग की सुन्दर लताएं लिपटी थीं, उन्हीं में दीपशिखा-सी राधा दौड़कर जा छिपी है। लाल साड़ी में उसने अंग-प्रत्यंग को छिपा लिया है। पवन, पानी, पक्षी अथवा पशु की आहट जिधर से होने लगती है वहीं से वह अपने प्रिय श्याम के आने की उत्कंठा से चौंक-चौंक कर उधर देखने लगती है। **श्रीकृष्ण** के आगमन की प्रतीक्षा में निकुंज को निहार कर वह पिंजड़े में बंद पक्षी जैसी स्थिति का अनुभव करने लगी है।

रसिकप्रिया के इस कवित्त को बून्दी के कलाकार ने बड़े ही प्रभावोत्पादक ढंग से प्रस्तुत किया है। राधा का लौकिक रूप लावण्य, पक्षियों का कलरव, नृत्यमग्न मयूर एवं हरिणों की उछल-कूद को देख पारदर्शी ओढ़नी ओढ़े पंथ निहारती राधा के हृदय में भी प्रिय मिलन की कूक उठने लगी है। पास रखे इत्रदान और पानदान की ओर उसका ध्यान ही नहीं गया है। कुल मिला कर प्राकृतिक छटा का सौन्दर्यपूर्ण अंकन कलाकार के श्रम की इति है।

विरही कृष्ण

बून्दी, लगभग 1700 ई.

जैसें मिल्यो प्रथम स्त्रवन-मग जाइ मन,
रवन भवन कीने अलिक अलक में।
मन मिलें मिले नैन केसौदास सबिलास,
छबि-आस भूलि रहे कपोल-फलक में।
नैन मिलें मिल्यो ज्ञान सकल सयान सजि,
तजि अभिमान भूल्यो तन की झल्क में।
तैसें छल बल साधि राधिकै मिलन कहँ,
चाहत कियो पयान प्रानहूँ पलक में।

श्री कृष्ण सखी से कह रहे हैं कि हे सखी! जिस प्रकार कानों से उसकी सुन्दरता का वर्णन सुनकर मेरा लालायित मन राधा से जा मिला, उसी प्रकार आनन्द विभोर होकर मेरे नेत्र भी उसकी प्राप्ति की आशा में अपने को भूल उसके कपोलों में रहने लगे हैं। नेत्र मिलन से चेतना का भी मिलन हो गया है। ठीक इसी प्रकार अब प्राणों की भी यही दशा है जो कि छल-बल से राधा के मिलन हेतु प्रस्थान को आतुर हैं।

बून्दी के इस अनुपम चित्र में कृष्ण का ऊपर झरोखे से राधा के कक्ष में निहारने पर नीचे सखी को राधा के प्रति उपजे अपने हृदय के भाव व्यक्त करते अंकित किया गया है। विषयगत छवि अंकन और काव्यमयी कल्पनाओं का आकर्षक रंग संयोजन सुरुचिपूर्ण है। सूक्ष्म से सूक्ष्म शब्दजाल को भी कलाकार ने रेखाओं की परिधि में बांधा है। उल्लेखनीय है कि तन्वी और प्रादुर्भूत यौवना नारी सौन्दर्य का चित्रण बून्दी के चित्रों में बड़ी कुशलता से किया गया है।

॥अथमालिनिकोबचनश्रीराधाजूसौ॥ ॥सवईया॥ ॥डुरिहैक्योंनषंनबसनदुतिजोब
नकीदेहहीकीजोतिहोतिद्योसअैसीरातिहै॥नाहकोसुबासुलगेंढ्केहैकैसीकेसवसु
नाइहीकीबासुनौंरनीरफारैंषातिहै॥देषितेरीमूरतिकीमूरतिबिसूरतिहौंलालन
कीड्रिगदेषिबेकोंललिचातिहै॥चलिहैक्योंचंदमुषीकुचनिकैंभारनअैंकचनिकैं
भारतोलचकिकटिजातिहै॥ ॥२३१॥ ॥
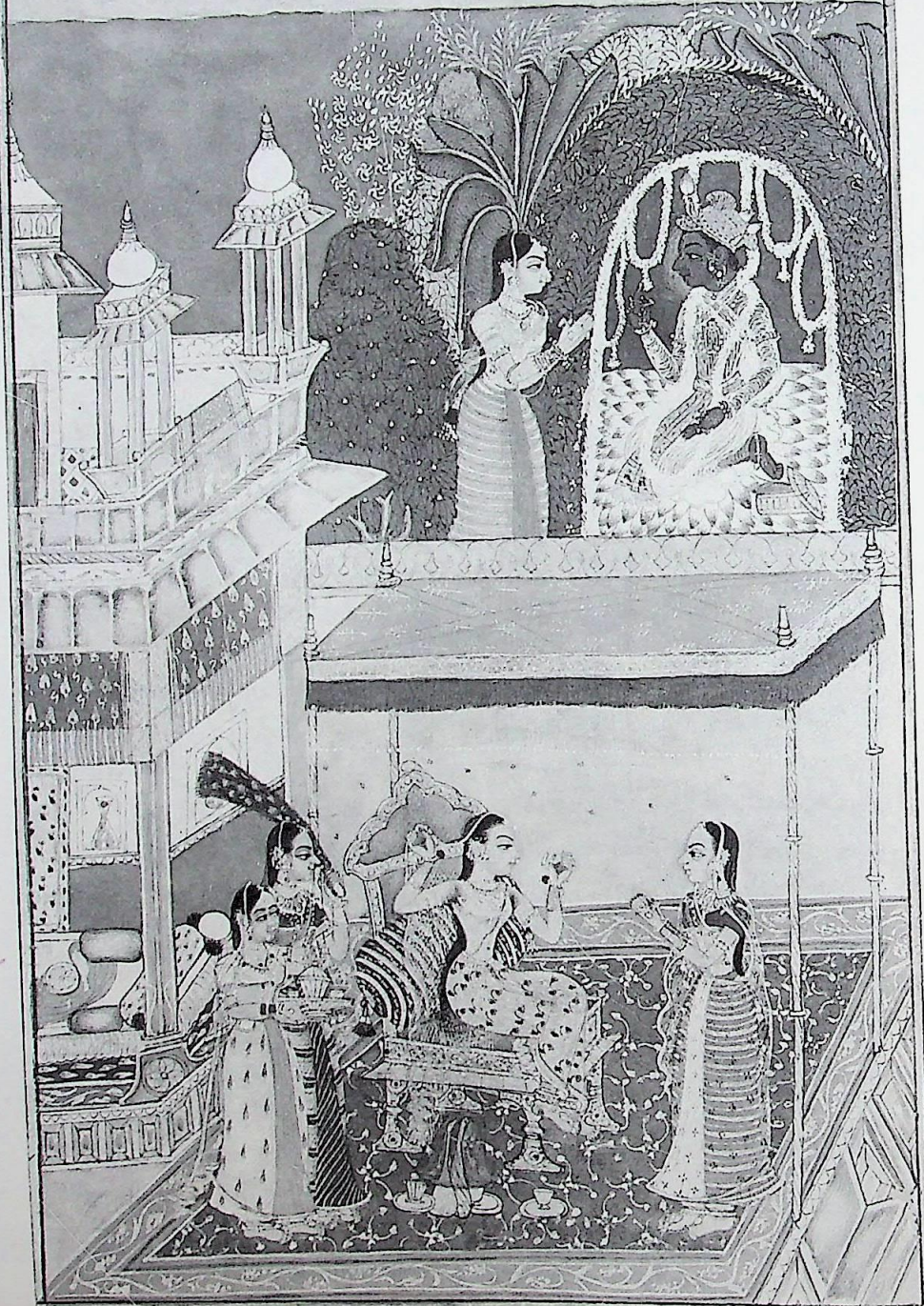
राधिका को मालिन का वचन

बून्दी, लगभग 1700 ई

दुरिहै क्यों भूषन बसन दुति जोबन की,
देह ही की ज्योति होति द्योस ऐसी राति है।
नाह को सुबास लागें हवैहै कैसी केसव,
सुभाव ही की बास भौंर-भीर फारे खाति है।
देखि तेरी सूरति की मूरति बिसूरति हौं,
लालन को दृग देखिबे कों ललचाति है।
चलिहै क्यों चंदमुखी कुचनि के भार भएँ,
कचनि के भार तौ लचकि लंक जाति है।

सखी राधा से कहती है कि हे राधा! तेरे सुकुमार तन की झिलमिलाहट के प्रकाश से रात्रि भी दिन के समान प्रकाशयुक्त हो जाती है। इसके अतिरिक्त तेरे यौवन की जगमगाती कांति पर यह सुसज्जित वस्त्राभूषणों की शोभा युक्त दीप्ति कैसे छिपाए छिपेगी। रूपमंजरी के इस मृदु शरीर की सुगन्ध के कारण तेरे चारों ओर भौंरे मंडराते रहते हैं किन्तु जब इस दिव्य देह पर कृष्ण के अनुराग की सुगन्ध और आ लगेगी तो न जाने तेरी क्या दशा होगी? अभी तो लम्बे केशों के भार से ही तेरी कमर में लचक आने लगी है। इस पर जब कुचों का भार और पड़ेगा तब न जाने तू कैसे चल सकेगी। मैं तो तेरे इस दिव्य सौंदर्य को देख सोचने लगी हूं कि कृष्ण को लख लेने पर जिसके लिए तू इतनी लालायित है, अनायास उत्पन्न होने वाले झंझटों से तेरी क्या दशा होगी। हे चन्द्रमुखी, उसी की कल्पना कर मैं चिन्तित हूं।

बून्दी कलम में अंकित इस चित्र के दो भाग हैं। भवन के आंगन में तनी चांदनी के नीचे सखियां राधा का श्रृगांर कर रही हैं। पसीना न आ जाए, इसके लिए एक सखी मयूरपंखी चंवर हिला रही है। आसन के समीप श्रृगांर सामग्री रखी हुई है। दूसरे दृश्य में सुसज्जित कृष्ण सघन कुंज में कमल की पंखुड़ियों की सेज पर विराजमान हैं। उनके चारों और पुष्पमालाएं समस्त वातावरण को सुवासित कर रही हैं। सम्मुख खड़ी सखी से कृष्ण राधा के श्रृगांर का विवरण उत्सुकता से सुनते प्रतीत होते हैं। बून्दी चितेरे ने दोहे के मर्म को हृदयंगम कर प्रत्येक शब्द के अर्थ को इस चित्र में अंकित करने का प्रयास किया है। चित्र की प्राकृतिक छटा भी कवित्त के अनुरूप ही दर्शनीय है।

॥अथश्रीकिस्नजूकंदंसिछ्या॥ ॥सवईया॥ ॥कुंकमऊबटिकुंमकुंमांकैंन्हवाडिजलसैंधौसिर
लडियाहिलाएकहारासमै॥चंदनुचढाइकलीफुलमालपैहेराइबेहीकाजआंजिमांजिकी
नीहैप्रकासमै॥केसवप्ररशरिकाहेकौंषवाउपांनजौपेमनमगनहैंश्रैसेहीबिलासमै॥तौवा
हीकौंमनाउहरिहाहाकरिपाइंपरिसबहीसुबासुबसैजाकेमुषबासमै॥२४८॥ ॥
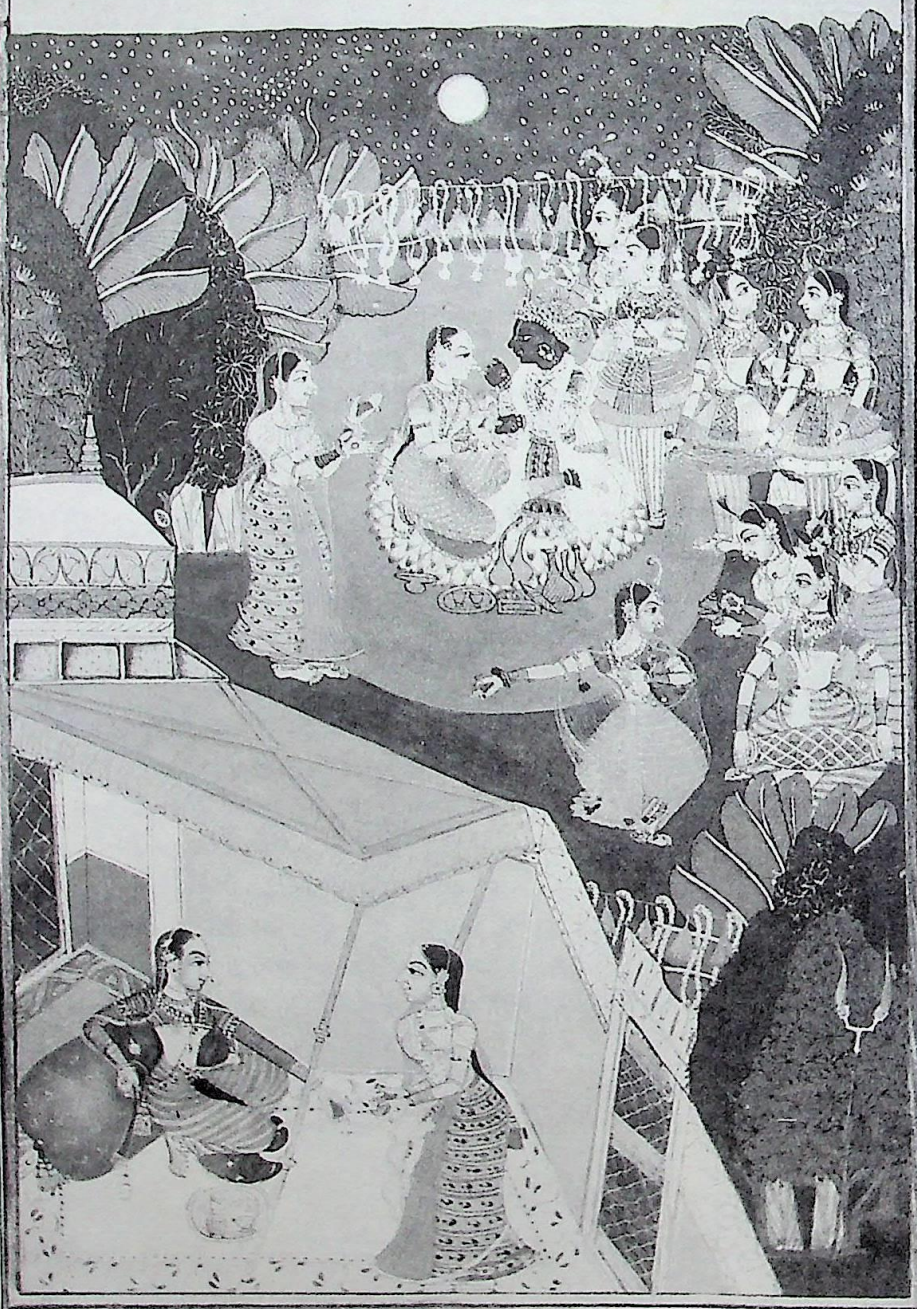
कृष्ण को शिक्षा

बून्दी, लगभग 1700 ई.

कुंकुम उबटि कुमकुमा के न्हवाइ जल,
सोंधो सिर लाइ याहि लाए कहा रास में।
चंदन चढाइ फूल माल पहिराइ भूलि,
बेही काज आँजि माँजि कीनी है प्रकास में।
केसव कपूर पूरि काहे कौं खवावौ पान,
जौ पै मन मगन है ऐसे ही बिलास में।
वाहि न मनावौ हरि हाहा करि पाइ परि,
सब ही सुबास बसै जाके मुख बास में।

सखी कृष्ण को शिक्षा स्वरूप उलाहना दे रही है कि हे कृष्ण! तुम इस गोपी को केसर के उबटन और उसके जल से स्नान कराकर तथा उसके केशों में सुगन्ध लगाकर, चांदनी रात के इस रास में क्यों लेकर आए हो? चंदन से सुरभित कर और पुष्पमाला से सजा-संवार कर ताम्बूल में कपूर डालकर उसे क्यों खिलाते हो? यदि आपका मन ऐसे ही विलास में मग्न होता है तो जाकर राधा के पैरों में पड़कर आप उसे क्यों नहीं मनाते। उस रूपदिव्या के श्रीमुख की सुगन्ध में सब प्रकार की सुगन्ध व्याप्त है। दिखाने को तो तुम अपनी नायिका लेकर आए हो पर सच तो यह है कि जो तुम्हारे हृदय-दृष्टि में व्याप्त है, उसे ही जाकर संवारिये-सिंगारिए।

केशव के इस कवित्त को आधार मानकर बून्दी के चितेरे ने पूर्णिमा की छिटकी चांदनी में नृत्य का दृश्य अंकित किया है जिसमें कदली और आम्र वृक्षों के मध्य तरुण गोपियां विविध रंगों के परिधानों से सुसज्जित हैं। मध्य में कृष्ण कमलदल की शैय्या पर आसीन श्रृगांरपूर्ण गोपी के संग रसलीन हैं। समीप खड़ी सखी कृष्ण को समझाने में प्रयत्नशील है। चित्र में उद्यान के एक ओर भवन भी दृष्टव्य है जिसका द्वार बंद है किन्तु वहां मशालों द्वारा प्रकाश किया गया है। भवन के भीतरी भाग में दृश्य आंगन का है जहां तनी चांदनी के नीचे मसनद पर हाथ रखे राधा सखी की बात बड़े ध्यानपूर्वक सुन रही है जो यह कह रही है कि रास में आज कृष्ण किसी अन्य गोपी को सजा-संवार कर लिए बैठे हैं और तुम यहां अकेली बैठी हो।

गगन में चन्द्रमा के साथ-साथ तारों का अंकन और भवन के प्रवेशद्वार पर मशाल का प्रकाश चित्र में रात्रि का आभास देता है। फूलों की भीनी मादकता, रसिया कृष्ण और गोपियों का नृत्य इस चित्र में रंगों के बिखराव से खूब उभरा है जो बून्दी चित्रकार की सफलता का प्रमाण है। उद्यान को गोपियों ने पुष्प मल्लिकाओं से कलात्मक ढ़ंग से सजाया है जिनकी महक वातावरण को आह्लादित कर रही है। कवि की कल्पना तक पंहुच कर चित्रकार ने चित्र को जीवंत कर दिया है।

श्रीकृष्ण का परिहास

बून्दी, लगभग 1700 ई.

सखि बात सुनौ इक मोहन की निकसी मटुकी सिर री हलकै ।
पुनि बाँधि लई सुनियै नतनारु कहूँ कहूँ बुंद करी छलकै ।
निकसी उहि गैल हुते जहँ मोहन, लीनी उतारि जबै चलकै ।
पतुकी धरी स्याम खिसाइ रहे, उत ग्वारि हँसी मुख आँचल कै ।

एक सखी दूसरी से कहती है कि हे सखी! जब वह चन्द्रबदनी ग्वालिन दूध की खाली मटकी सिर पर लेकर चली तब मटकी का मुंह भी उसने कपड़े से कस कर बांध दिया और जहां तहां कुछ दूध की बूंदें भी छिटक दीं जिससे दूध के झलकने का आभास होने लगे । यह सब स्वांग कर वह गोरी गज-गति से उसी पथ से निकली जिधर मोहन का ठौर था । मोहन ने ग्वालिन के सिर पर दूध की मटकी देख उससे मनमानी कर दान के बहाने उतरवा लिया । परन्तु जब मटकी खोली और उसमें कुछ न मिला तो कृष्ण को बड़ी लज्जा आई । उधर ग्वालिन भी आंचल में मुंह छिपाये खड़ी-खड़ी हंसती रही और कृष्ण भाग चले ।

कृष्ण विषयक चित्रों का भंडार बून्दी शैली की अनूठी धरोहर है । जीवन के हास-उल्लास से अंकित हुई यह निधि मात्र बून्दी चित्रकला की उपलब्धि नहीं बल्कि भारतीय संस्कृति की जीवंत संवाहिका भी है ।

चित्र में बून्दी परिधानों में अंकित गोपियां और नील वर्ण कृष्ण के अतिरिक्त हरे रंग का प्रयोग हृदयग्राही है । क्षितिज में सूर्य के उदय की लालिमा से भोर के समय का ज्ञान होने लगता है । जहां-तहां पक्षी कलरव करते प्रतीत होते हैं जो बून्दी शैली की महत्वपूर्ण उपलब्धि है ।

॥अथ श्रीकिस्नजू को बीभत्सरस॥ ॥सवईया॥ ॥टूटेगरहुंनद्वनैघूमघूमसैंनिसनै
ऊंगुरछेगोडीसांपबीछीननिघातजू॥कंटककलितत्रिनबलितबिगंधजलतिंनिकै
तलपतलताकौंललिचातजू॥कुलराकुचीलगातअंधतंमअघरातकहिनसकतबा
तत्रतिअकुलातजू॥छैंडीमैघुमैकिघरशीघंनकैघंनस्यामउपरबरनीनिपंहजातन
घिंनातजू॥ ॥२७९॥ ॥
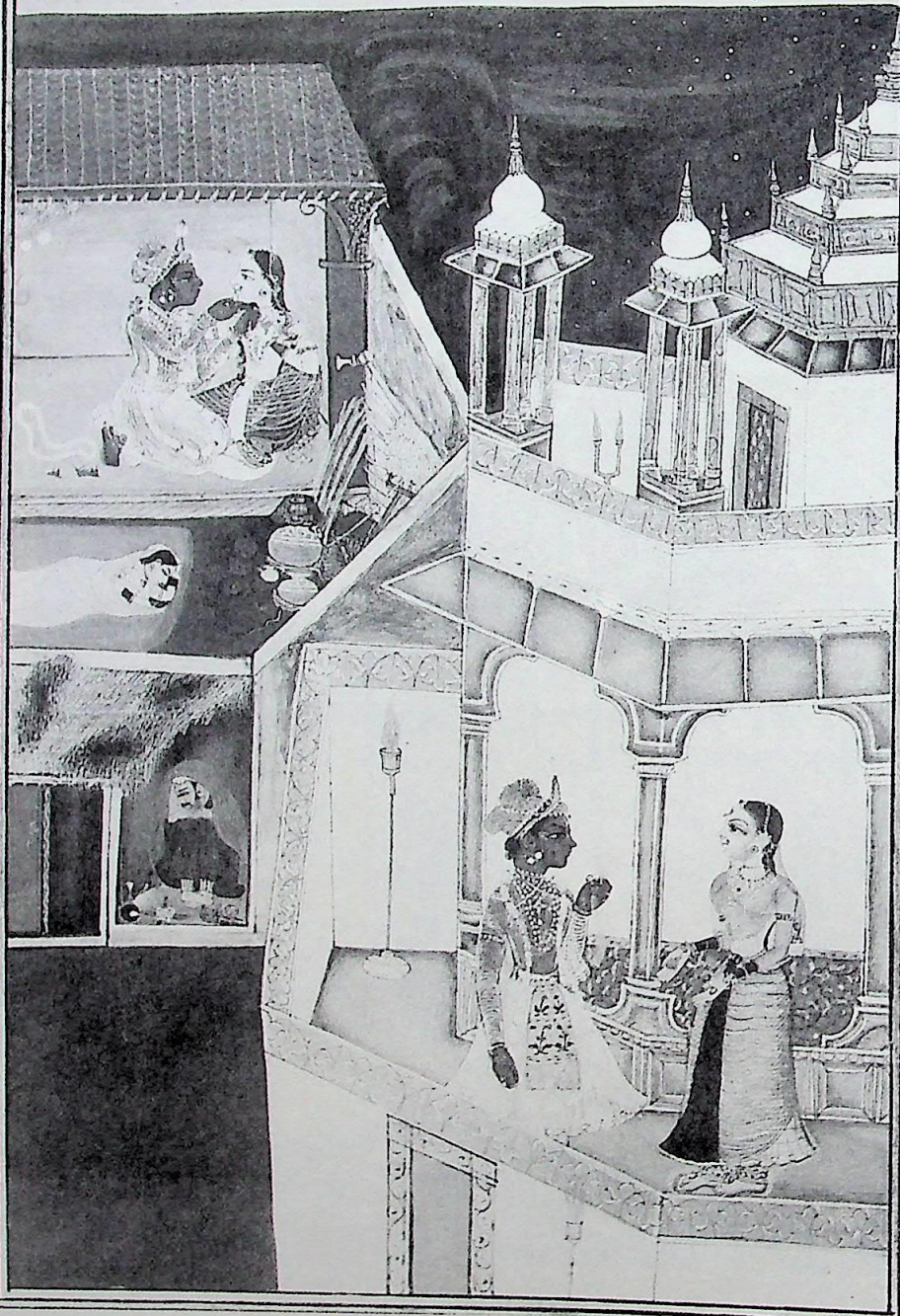
राधा की कृष्ण को ताड़ना

बून्दी, लगभग 1700 ई.

टूटे ठाट घुनघुने धूम धूरि सों जु सने,
झींगुर छगोड़ी साँप, बीछिन की घात जू।
कंटककलित त्रिनबलित बिगंधजल,
तिनके तलपतल ताक ललचात जू।
कुलटा कुचीलगात अंधतम अधरात,
कहि न सकत बात अति अकुलात जू।
छेंड़ी में घुसौ कि घर ईंधन के घनश्याम,
परघरनीनि पहँ जात न घिनात जू।

राधा कृष्ण से कहती है कि हे कृष्ण !क्या तुम्हें थोड़ी सी भी घिन नहीं आती। जिस घर का ठाट टूटा है, घुन लगा है, धुएं और धूल से भरा है, जहां झींगुर, भौंरी, सांप, बिच्छु फिरते रहते हैं, घास-फूस और कांटों से घिरा है, वहां आस-पास सड़े पानी की दुर्गन्ध आती रहती है, ऐसे स्थान पर बनी शैय्या पर शयन करने के लिए तुम लालायित रहते हो। मैले-कुचैले वस्त्रधारी वह कुलटा जिसके घर में घोर अंधकार रहता है, उसके यहां तुम आधी रात के समय पहुंचते हो। मैं जब इसके विषय में सोचती हूं तो फरुरी आने लगती है। कभी किसी संकरी गली में घुस जाते हो, तो कहीं ईंधन-कंडों के घर में घुस जाते हो। ऐसे स्थान में रहने वाली पर-स्त्रियों के यहां जाते तुम्हें घृणा तक नहीं आती, कैसी विडम्बना है।

केशव के इस कवित्त को आधार मानकर चित्रकार ने चित्र को दो भागों में विभक्त किया है। एक भाग में वह चित्रण है जिसका उल्लेख उपरोक्त हुआ है और दूसरे भाग में सुन्दर अटारी हैं जिसमें राधा कृष्ण से वार्तालाप कर रहीं है। समय रात्रि का है जहां-तहां मशालें जल रही हैं। राधा का निवास भव्य, सुन्दर, स्वच्छ एवं प्रकाशमय है और दूसरी ओर ठीक इसके विपरीत दृश्य देखकर ऐसा लगता है कि राधा के प्रश्नों का कृष्ण के पास एक भी उत्तर नहीं है और वे ठगे से खड़े दिखाई दे रहे हैं।
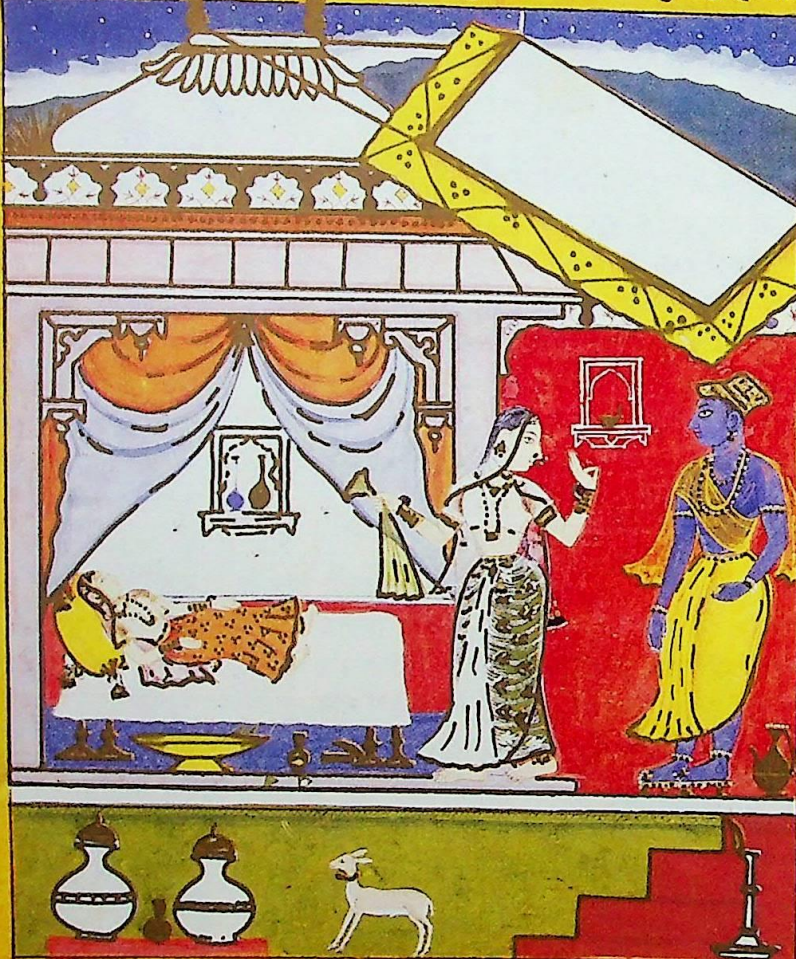
मुग्धा राधा की दशा

मेवाड़, लगभग 1600 ई.

सुख दै सखीनि बीच दै कै सौहैं द्याइ कै,
खवाइ कछू स्वाइ बस कीनी बरुबसु है।
कोमल मृनालिका सी मल्लिका की मालिका सी,
बालिका जु डारी मीड़ि मानुसु कि पसु है।
जानै न बिभात भयो केसव सुनै को बात।
देखौ आनि गात जात भयो किधौं असु है।
चित्र सी जु राखी वह चित्रिनी बिचित्र यह,
देखौ धौं नए रसिक या में कौन रसु है।

सखी कृष्ण से कह रही है कि तुमने सखियों को मध्यस्थ बनाकर और शपथ खाकर राधा को बरबस कुछ मादक पदार्थ खिलाकर वशीभूत किया। फिर उसके साथ शैय्यागमन किया। परिणामस्वरूप उस रसामृतरूपी चन्द्रिका-सी सुकुमारी बाला को शैयागमन के समय मसल डाला। आपने उसके साथ अमानुष, कठोर एवं निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया है। आप मेरी बात क्यों नहीं सुनते कि अभी भी आपने उसे मुक्त नहीं किया यद्यपि प्रभात होने वाला है। एक क्षण उसकी दशा भी देखो, वह रस-रूपा विदेह-सी हो चुकी है। हे नए रसिक, आपको ऐसा कृत्य करने में कौन सा आनन्द मिला। आपने इस कोमलांगी से विचित्र ही व्यवहार किया है।

मेवाड के चित्रकार ने चित्र में प्रज्वलित दीप का चित्रण कर रात्रि का बोध कराया है। ऊपरी भाग में उसने शयनकक्ष का चित्रण किया है, जहां नायिका शैय्या पर अचेतावस्था में पड़ी है जिसे सखी निर्मोही कृष्ण को दिखा रही है। चित्र रंगों के माध्यम से कवित्त के तथ्य को और आत्म-विस्मरण का भाव अंकन करने में सक्षम है।

परन्तु कवित्त और चित्र के भावार्थों से भिन्न वास्तविकता यह है कि कृष्ण ने मोहन शक्ति का उपयोग कर अपने अचूक प्रहार से कमलनयनी को मसला नही है और न ही वह निश्प्राण ही हुई है अपितु कृष्ण के रसास्वाद के पश्चात् वह अंतश्चेतना की गहनता में डूब गई है। उसे पुनः बर्हिचेतना में लाये जाने पर ऐसा प्रतीत होगा, मानों चौक कर स्वप्न से जागी हो। प्रेम-विभोर हो जाने पर वह सचेत भी कैसे रह सकती है। क्या प्रेम और आत्मसुधि का एक साथ निर्वाह होना संभव नहीं है।

श्रीकृष्ण जू को विलास हाव

मेवाड़, लगभग 1690 ई.

जिन न निहारे ते निहोरत निहारिबे कौं।
काहू न निहारे जिन कैसें हूँ निहारे हैं।
सुरनर नाग नवकन्यानि के प्रानपति,
पतिदेवतानि हूँ कि हियनि बिहारे हैं।
इहि बिधि केसौदास रावरे असेष अंग,
उपमा न उपजी बिरंचि पचि हारे हैं।
रूप-मद-मोचन मदन-मद-मोचन हैं।
तीय-ब्रत-मोचन बिलोचन तिहारे हैं।

सखी कृष्ण से कह रही है कि हे कृष्ण! तुम्हारे नेत्रों में वशीकरण का जादू है। जिन्होंने तुम्हारे अनियारे नेत्र नहीं देखे, वे देखने को लालायित हैं। किन्तु उनके सौन्दर्य को देख गोपियां अपने आपको सम्भाल नहीं पातीं। तुम्हारे ये नेत्रसुर अचूक मोहकता को व्यंजित करते हैं। नागकन्या और नवकन्याएं इन्हें अपने प्राणों से प्रिय मानती हैं और इन नेत्रों को निहार कर पतिव्रता स्त्रियों के हृदयमन का अपहरण होने लगता है। मोहन, तुम्हारा चरम आकर्षण सम्पूर्ण है जिसकी उपमा ब्रह्मा भी नहीं ढूंढ सकते और कामदेव भी आपके सलोने नेत्रों से द्वेष करता है।

मेवाड़ शैली के चित्रकार ने रास के गोलाकार चित्रण में विविध रंगों के परिधानों में गोपियों को कृष्ण के चारों ओर नृत्य मुद्रा में अंकित किया है जो सुध-बुध भूल कृष्ण की बांसुरी के स्वरों पर नृत्य कर रहीं हैं। रास केवल आत्मा-परमात्मा के सामीप्य को ही मुखार नहीं करता बल्कि उनकी पारस्परिक रति को भी अवसर प्रदान करता है। इस रास-लीला में कृष्ण की नृत्य छवि को देख कर सुर-विमान ठहर गये हैं।

ब्रह्मा और अन्य देवगण आकाश से फूल बरसा रहे हैं। दो गोपियां ढ़ोलक और मंजीरे बजा रही हैं। चित्र के दाहिने कोने के कुंज में सखी राधा को कृष्ण के विलास भाव की व्याख्या कर रही है जिसे चित्रकार ने मोहक और सजीले रंगों से चित्रित करने का प्रयास किया है। नाथद्वारा के चितेरों ने इस प्रकार के चित्रण से प्रभावित हो कर पिछवाई चित्रों का निर्माण आरंभ किया होगा।

प्रच्छन्न कामाभिसारिका

मेवाड़, लगभग 1640 ई.

उरझत उरग चपत चरननि फन,
देखत बिबिध निसिचर दिसि चारि के।
गनति न लागत मुसलधार सुनत न,
झिल्लीगन-घोष निरघोष जल-धारि के।
जानति न भूषन गिरत, पट फाटत न,
कंटक अटकि उर उरज उजारि के।
प्रेतनि की पूछैं नारि कौन पै तैं सीख्यों यह,
जोग कैसो सारु अभिसारु अभिसारिके।

प्रेत स्त्रियां कनक-रज रुपी राधा से पूछ रही हैं कि हे सुकोमला! प्रेम-क्षुधा के लिए इस मूसलाधार वर्षा और अंधकार में जाते समय तुमने अपने पैरों में उलझे सर्पों के फणों को बड़ी निर्भीकता से कुचल दिया। चारों ओर से निशाचरों की डरावनी आकृतियां भी तुम्हें भयभीत न कर सकी। वर्षा से उन्मत्त झींगुरों की ध्वनि और जल-प्रवाह की भयातुर ध्वनि का भी तुम्हारे हृदय पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। गन्तव्य की ओर अग्रसर होते हुए तुम्हें अपने आभूषणों के गिरने का भी आभास नहीं हुआ। कांटों में उलझकर वस्त्रों के फटने और स्तनों में शूलों के चुभने पर उत्पन्न कष्ट को भी तुमने सहज ही सह लिया। इस प्रकार की एकाग्रता और तन्मयता को देख वे राधा से पूछती हैं कि हे अभिसारिके ! तूने योग साधना के तत्व से पूर्ण यह अभिसार किससे सीखा है।

मेवाड़ शैली के चित्रकार ने रसिक कवि केशव के इस कवित्त के शब्दों का रेखाओं में सटीक भावार्थ मुखरित कर दिया है। राधा का गन्तव्य और कुन्जों में प्रतीक्षारत कृष्ण को अंकित कर चितेरे ने अभिसारिकाओं का मनोबल और स्वाभिमान गर्वित कर दिया है। चित्र में जहां-तहां भयावह प्रेतों, सर्पों, वन-पशुओं और वृक्षों की घनी छटा के मध्य राधा की एकाग्रता क़ी सभवतः कृष्ण ने जो परीक्षा ली है उसे देख सब जीव-जन्तु आश्र्चय चकित दिखाई पड़ रहे हैं।
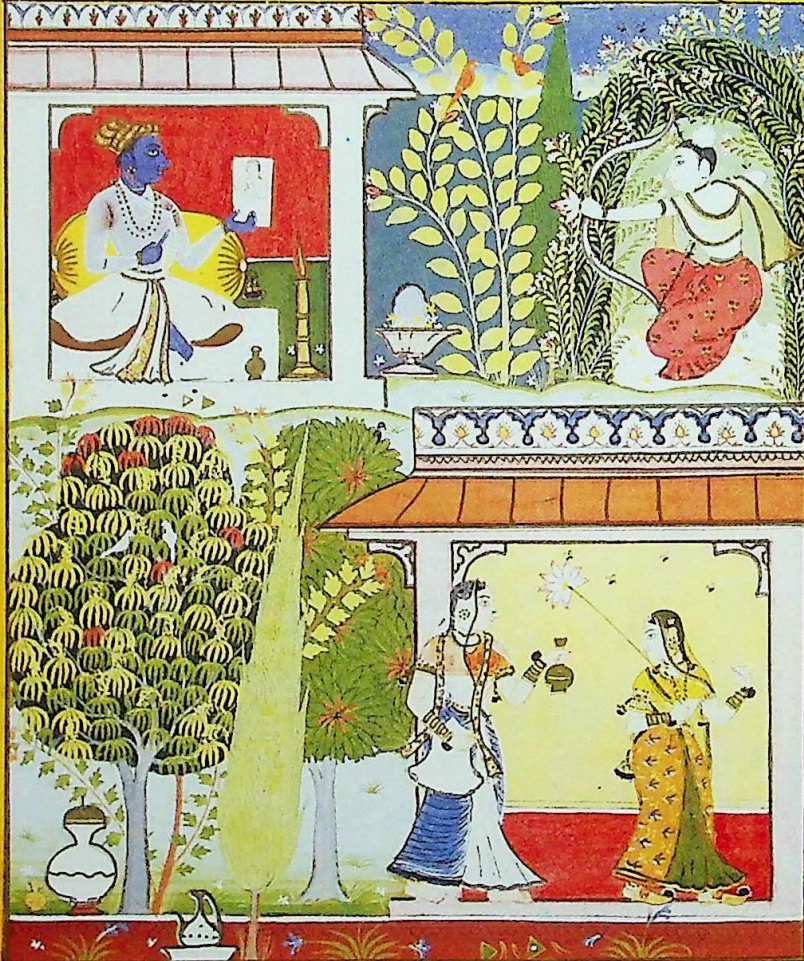
श्री कृष्ण की प्रच्छन्न चिन्ता

मेवाड़, लगभग 1640 ई.

केसौदास सकल सुबास को निवास तन,
कहि कब भृकुटि बिलास त्रास छोलि है।
कैसो है सुदिन बड़भागी अनुरागी जिहिं,
मेरो दृग वाके संग लागि लागि डोलि है।
ऐसी ह्वैहै ईस पुनि आपने कटाछ मृग-
मद घनसार सम मेरे उर ओलिहै।
दीप के समीप पुनि दीपति बिलोकि वह,
चित्र की सी पूतरी सु क्यों हूँ हँसि बोलि है।

कृष्ण अपने मन में राधा के नैसर्गिक-रूप के विषय में सोचते हैं कि वह रास-विलास का विकास-कन्द है जिसमें समस्त सुगन्धों का समावेश है। स्वतः से ही कृष्ण प्रश्न करते हैं कि राधा कब अपने बंकिम सौन्दर्य की सृष्टि (भृकुटि-विलास) से मेरा त्रास (तड़प) दूर करेगी? वह भाग्यशाली प्रेमपूर्ण शुभ दिन कब होगा जब मेरे नेत्र उसकी भृकुटि के अनुरागी होकर चलेंगे। हे ईश्वर, क्या ऐसा संभव होगा कि उसके नयन-वाण मेरे हृदय को अपना लक्ष्य बनाएंगे? क्या ऐसा दिन भी कभी आएगा जब किसी दीपक के प्रकाश में चित्र की पुतली-सी विशालाक्षी राधा की दीप्ति मुझे दिखाई पड़ेगी और तब वह मुझसे हंस कर बोलेगी।

मेवाड़ शैली के इस चित्र में वहां के प्रसिद्ध चितेरे साहिबदीन ने राधा के भ्रू (भृकुटि)को धनुष से उपमित किया है। इस धनुष का विशेष सौन्दर्य है जिसमें कामदेव ने पुष्पवाण पकड़ रखा है। वास्तव में राधा की रूपगत विशेषताओं में उसके नेत्र और भृकुटि काम-बाण के प्रतिरूप हैं। एक कक्ष में चौकी पर विराजे कृष्ण कातरता से राधा का छवि चित्र निरख रहे हैं। नीचे के कक्ष में राधा सखी से वार्तालीन है। समीप ही आम्र वृक्ष पर एक शुक युगल प्रणय-प्रसंग में अंकित है। वृक्ष के नीचे एक मृदघट अंकित है जो पिपासा शांति का प्रतीक है। चित्रकार ने हलके और गहरे रंगों के प्रयोग से विषय के भावों को और अधिक मुखरित कर मनोरम बना दिया है।
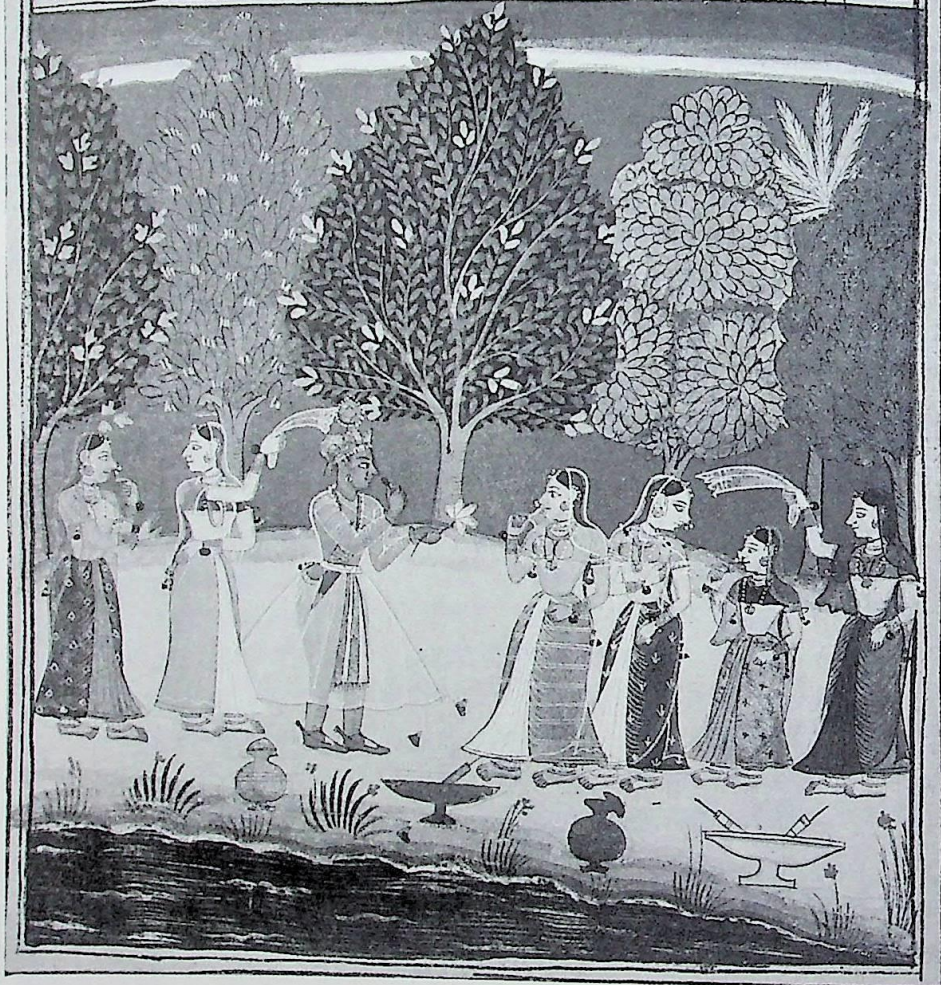
कृष्ण की अठखेलियां

मेवाड़, लगभग 1700 ई.

नँदनंदन खेलत हे बने गात बनी छबि चंदन के जल की।
वृषभानुसुताहि बिलोकत ही रुचि चित्त में बिभ्रम की झलकी।
गिरि जात न जानत पाननि खात बिरी करि पंकज के दल की।
बिहँसी सब गोपसुता हरि लोचन मूँदी सुरोचि दृगंचल की।

हे सखी! श्रीकृष्ण सुन्दर वस्त्रों में सजे खेल-खेल रहे हैं और उनके चंदन-लेप की सुगन्ध अच्छी लग रही है। अचानक उन्हें राधा दिखाई दे जाती है जिसे देखते ही उनके मन में विभ्रम का ऐसा रंग चढ़ा कि उन्हें यह पता ही न चला कि उनके हाथ से ताम्बूल छूट कर कब गिर गए और हाथ में लिये कमल के पत्तों को ही बीड़ा समझ कर खाने लगे। यह देख सब की सब गोपियां खिल-खिला कर हंस पड़ी। आभास होने पर श्रीकृष्ण को लज्जा आने लगी जिससे उन्होंने अपने नेत्र मूंद लिए।

मेवाड़ शैली के इस चित्र में क्रमबद्ध विविध वृक्षों को अंकित किया गया है। चित्र में गहरे रंगों का प्रयोग हुआ है जो राणा अमरसिंह के समय का है। सम्मुख रखी मटकियां इन गोपियों की ही लगती हैं। समीप में पिचकारियां भी दृष्टव्य हैं जिनसे कृष्ण द्वारा रंग खेलने का आभास होता है। इस चित्र में राधा और उसकी सखियों के मुखड़ों पर जो गूढ़ मुस्कान उभरी है, देखने योग्य है। प्रत्येक शैली की अपनी एक विशेषता होती है और कलाकार उसे उभारने का प्रयास निरन्तर करते रहते हैं।
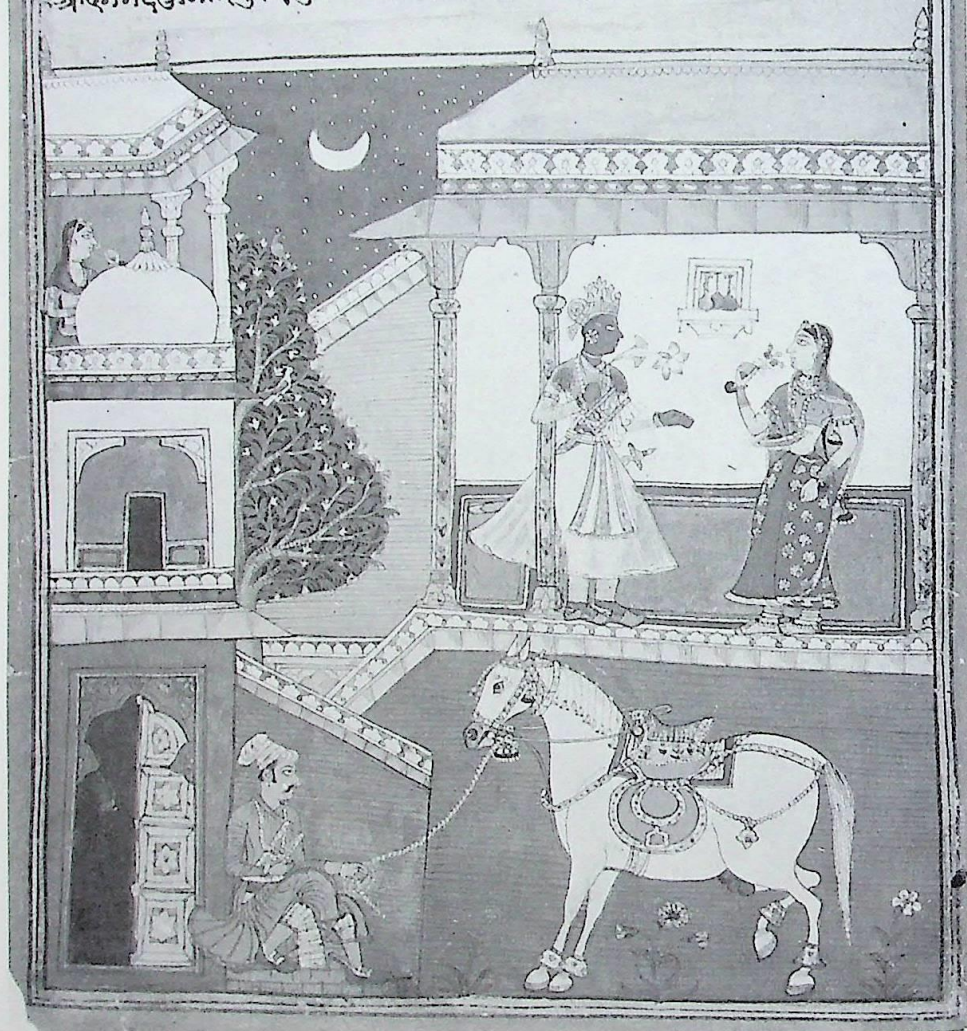
यायावर कृष्ण

मेवाड़, लगभग 1730 ई.

सुधि भूल गई, भुलए किधौं काहु कि भूलेई डोलत बाट न पाई।
भीत भए किधौं केसव काहू सों, भेंट भई कोऊ भामिनि भाई।
मग आवत हैं किधौं आइ गए, किधौं आवहिंगे सजनी सुखदाई।
अब आए न नंदकुमार बिचारि, सु कौन बिचार अबार लगाई।

राधा के विरह की सीमा असीम है। इस सवैये में राधा शंकित है, किसने उसके कृष्ण को भरमा रखा है, जिस पर उनका मन डोल गया है। कृष्ण से देरी हो जाने के कारण राधा के हृदय में व्याकुलता उत्पन्न होने लगी थी कि अर्धरात्रि होते-होते कृष्ण आ पहुंचे।

राणा अमरसिंह द्वितीय (1698-1710) कालीन मेवाड़ शैली के इस चित्र में उपरोक्त सवैया चित्रित किया गया है जिसमें चित्रण की मौलिक विशेषता है। योद्धा रूपी कृष्ण ने शीघ्र पहुँचने के लिए द्रुतगामी अश्व का प्रयोग किया है जिसे कलाकार ने दो खण्डों की हवेली के नीचे अंकित किया है। पीछे गगन में तारों के अंकन और अर्धचन्द्र की छिटकी चांदनी से रात्रि का बोध होने लगा है जो इस सवैये के अनुरूप है।

राधा का कृष्ण को सन्देश

मेवाड़, लगभग 1660 ई.

औधि दै आए उहाँ उनसों यह भोजन कै अब ही हम ऐहैं।
ताकहँ तौ अब लौं बहराइकै राखी बरयाइ मरु करि में हैं।
बैठे कहा इनके ढिग केसव जाऊ नहीं कोउ जाइ जु कैहैं।
जानत हौ उन आँखिनि तें अँसुवा उमहे बहुर्‌यो पुनि रैहैं।

केशव प्रछन्न प्रोषिता नायिका के विषय में लिखते हैं कि पहले तो राधा कृष्ण के मनाने से भी नहीं मानी, यद्यपि उन्होंने उसके पांव तक पड़े और जब उन्होंने किसी अन्य के घर भोजन का निमंत्रण स्वीकार कर लिया तो राधा विहल हो प्रकाश प्रोषिता नायिका के रूप में सखी को अपने हृदय की व्यथा व्यक्त करती है और इच्छुक है कि किसी प्रकार कृष्ण लौट आएं। राधा उस नायिका को अपनी सखी के द्वारा संदेश पहुंचाती है जिसने कृष्ण को भोजन का निमंत्रण दिया है। परन्तु उसे फिर भी यह संदेह है कि क्या कृष्ण बुलाने से तुरन्त लौटेंगे?

मेवाड़ शैली के इस कलाकार ने प्रसिद्ध चित्रकार साहिबदीन की शैली का अनुकरण कर चित्र को इस प्रकार दो भागों में विभक्त किया है जिसे राधा के निवास और दूसरे घर में जहां कृष्ण को निमंत्रित किया गया है, अन्तर दिखाई देता है जो सखी के प्रस्थान से और स्पष्ट हो गया है। राधा और सखियों के परिधानों एवं कृष्ण की वेशभूषा में मेवाड़ी पगड़ी के अतिरिक्त मोतियों के आभूषणों का अंकन चित्र की विशेषता है।
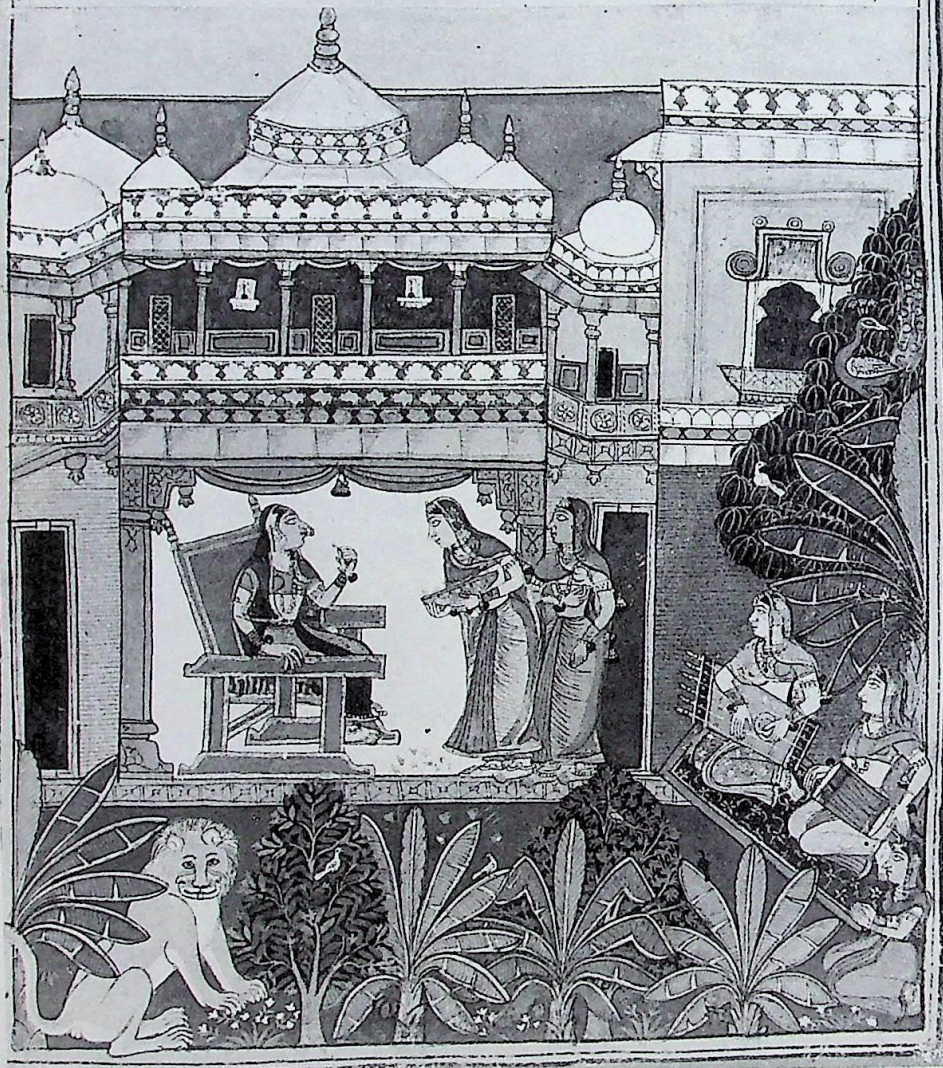
विप्रलब्धा नायिका

मेवाड़, लगभग 1700 ई.

सूल से फूल सुबास कुबास सी भाकसी से भए भौन सभागे।
केसव बाग महाबन सो जुर सी चढ़ी जोन्ह सबै अँग दागे।
नेह लग्यो उर नाहर सो निसि नाह घरीक कहूँ अनुरागे।
गारी सो गीत बिरी विष सी सिगरेई सिँगार अँगार से लागे।

नायक के कहीं अन्यत्र रम जाने के कारण नायिका को रात्रि प्रतीक्षा में जग कर बितानी पड़ी, जिसका हर प्रहर उसे पहाड़ के समान लग रहा है। फूल कांटो के समान दिखते हैं जिनसे निकली सुगन्ध भी बुरी बास सी भनक देती है। मनमोहक भवन भाड़ से प्रतीत होते हैं बाग-बगीचे भयानक जंगल के समान और उसमें पूर्णिमा की छिटकी चांदनी उसे ज्वर की भांति जलाए जाती है। मधुर गीत गाली के समान और तांबूल विष के समान लगते हैं। अर्थात् समस्त श्रृंगार अंगार की भांति जलते प्रतीत होते हैं। कितना विरोधाभास है नायिका के हृदय में, जिसे केशव ने उपरोक्त दोहे में जिस चातुर्य से वर्णन किया है उसका उतने ही चातुर्य से मेवाड़ शैली के कलाकारों ने अंकन किया है। वास्तव में राधा का रूप चित्रण उनकी श्रृंगार-लीलाओं के प्रसंग में एक अनिद्य सुन्दरी के रूप में हुआ है। राधा का लौकिक श्रृंगारयुक्त चित्रण कवि-कल्पना के अनुरूप ही है। मेवाड़ शैली के इस चित्र में राधा को सखियां संगीत सुनाने में व्यस्त दिखाई गई हैं परन्तु उसे कुछ भा ही नहीं रहा है। कदली वृक्षों से घिरी हवेली, मेवाड़ी स्थापत्य कला का अनुपम उदाहरण है।

कोरी: ॥ सवइया :॥ २१
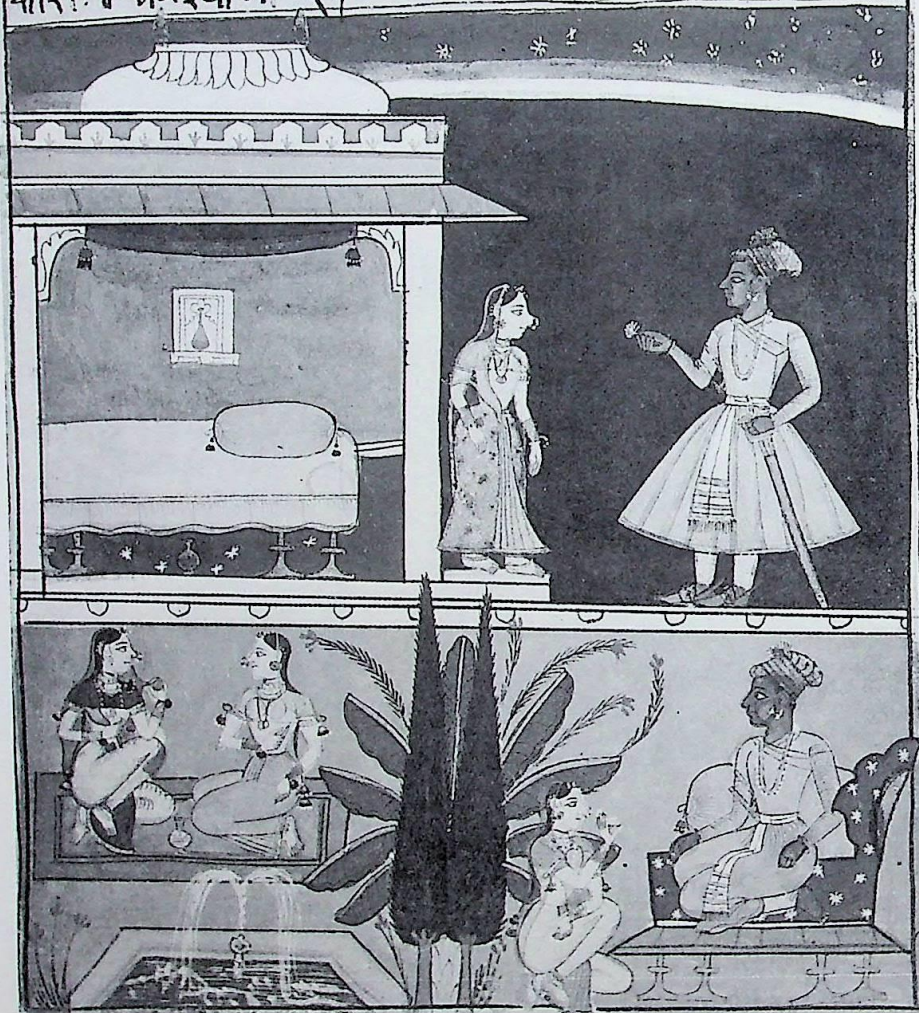
कृष्ण का पूर्वानुराग

मेवाड़, लगभग 1800 ई.

भाँति भली बृषभानलली जब तें अँखियां अँखियानि सों जोरी।
भौंह चढ़ाई कछू डरपाइ बुलाइ लई हँसि कै बस भोरी।
केसव काहू त्यौं ता दिन तें रुचि कै न बिलोकति केतौ निहोरी।
लीलत है सब ही के सिंगार अँगारनि ज्यों बिन चंद चकोरी।

कृष्ण सखी से कह रहे हैं कि जब से बृषभान की पुत्री राधा ने मेरी इन आंखों में भरपूर नेत्रों से देख-हँस कर इन भोली-भाली बेचारी आँखों को भौंहें चढ़ाकर, डरा-धमका कर अपने वश में करके अपने पास बुलाया है, उस दिन से अब ये आंखे किसी अन्य की ओर रुचि-पूर्वक देखती ही नहीं। मैंने इन्हें कितना समझाया पर व्यर्थ। जैसे बिना चन्द्रमा के चकोरी अंगारे लीलने (खाने) लगती है वैसे ही राधा के मुख चन्द्र के बिना मेरे ही नेत्र हृदय की सारी उमगें खाए जा रहे हैं। जब उसकी छवि आँखों के आगे झूलने लगती है तो इस मांस की सांस में मुझे सौरभ नहीं मिलता।

मेवाड़ी कलम के इस चित्र में श्रीकृष्ण मुकुट के स्थान पर पगड़ी बांधे योद्धा के समान तलवार धारण किये हुये राधा के मीनाक्षी नयनों को देख विस्मृत से खड़े हैं। नीचे के दृश्य में कृष्ण सखी को अपनी हृदय-व्यथा सुना रहे हैं। उनकी व्यथा सुन सखी राधा को कृष्ण की विरह व्यथा सुनाती अंकित है।

राधा का विषाद

मेवाड़, लगभग 1700 ई.

कौन कें न प्रीति, को न प्रीतमहिं बिछुरत,
याही कें अनोखो पतिब्रत गाइयत है।
केसौदास जतन कियें ही भलें आवै हाथ,
और कहा पच्छिनि के पाछें धाइयत है।
उठि चलि जौ न मानै काहू की बलाइ जानै,
मानसै जु पहिचानै ताकें आइयत है।
याकें तौ है आजु ही मिलौं कि मारि जाउँ ऐसें,
आगि लागें मेरी माई मेह पाइयत है।

सखी राधा को समझाते हुए कह रही है कि किसके हृदय में प्रेमांकुर नहीं होते और किसे बिछुड़े प्रीतम से वियोग नहीं होता। राधा की दशा देख वह उसे संतोष दे रही है कि जब कोई पक्षी उड़ जाता है तो क्या वह हाथ आता है ? कृष्ण भी उसी पक्षी के समान हैं। भला कहीं आग लगने पर मेघ बरसे हैं। यदि उन्हें तुझ से मोह होता तो अवश्य आते । यदि इतने पर भी तू नहीं समझती तो मैं चली। सखी के इस कथन से राधा सोचने लगी है कि अब वह प्राण त्याग उनसे जा मिले।

मेवाड़ी शैली के इस चित्र को कलाकार ने तीन भागों में विभाजित कर इस कवित्त का अंकन किया है। एकान्त में खड़ी सखी माधव को राधा की स्थिति से अवगत कराने के लिए प्रस्थान कर रही है। इससे पूर्व के कक्ष में राधा विरहाग्नि से मूर्छित-सी शैय्या पर पड़ी है। तीसरे भाग में कृष्ण के न आने पर वह कल्पनारूप मरणोपरान्त उनसे मिलती हुई अंकित की गई है। पोशाकों का चित्रण भी मेवाड़ी प्रचलन के अनुरूप ही किया गया है जो इस शैली का आकर्षण है।
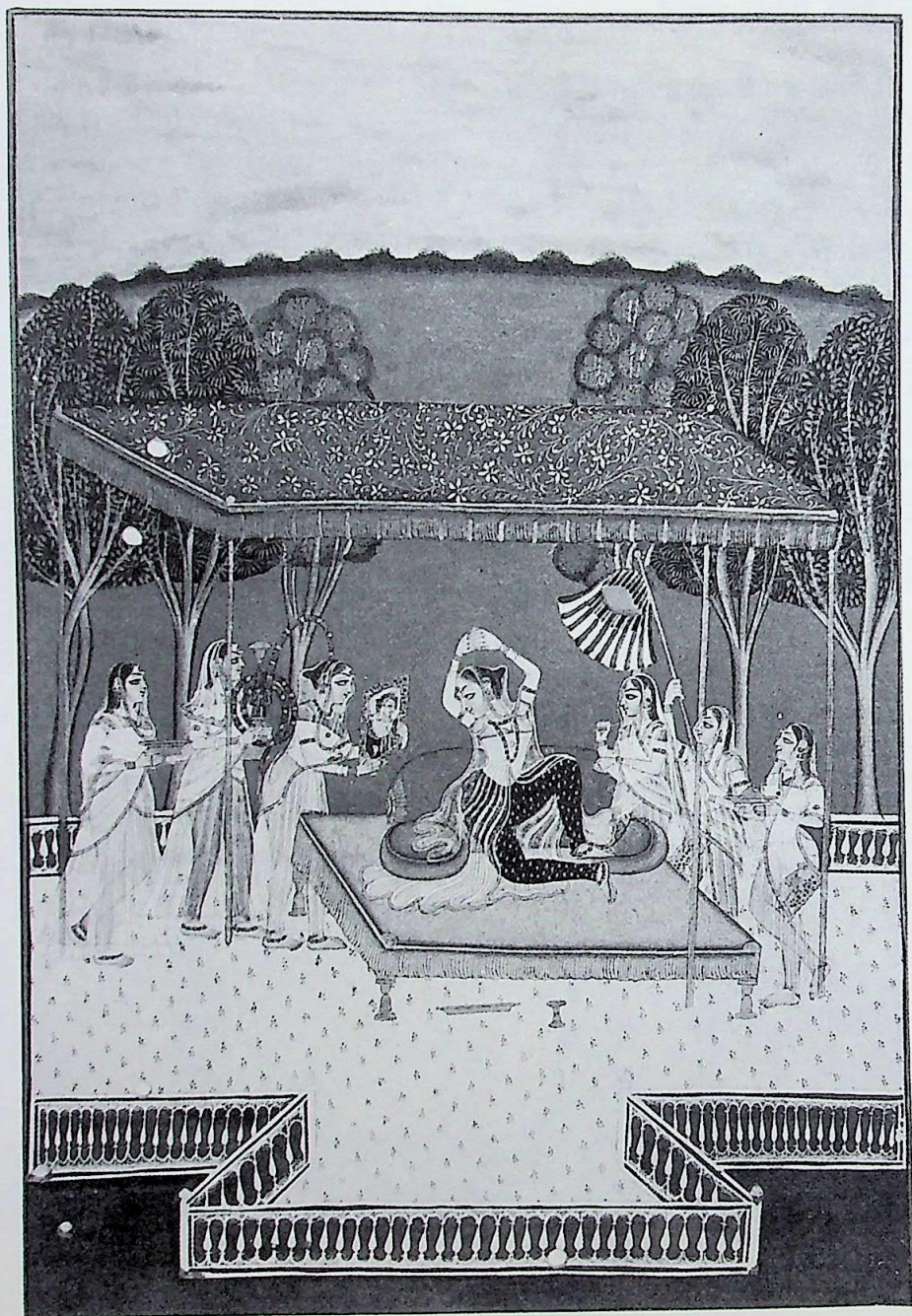
षोड़शी राधा का सोलह श्रृंगार

दतिया, बुन्देलखण्ड, लगभग 1780 ई

प्रथम सकल सुचिमंजन अमल बास,
जावक सुदेस केस-पास को सुधारिबो।
अंगराग भूषन बिबिध मुखबास राग,
कज्जल-कलित लोल लोचन निहारिबो।
बोलनि हँसनि मृदु चातुरि चितौनि चारु,
पलपल प्रति पतिब्रत प्रतिपारिबो।
केसौदास सबिलास करहु कुँवरि राधे,
इहि विधि सोरह सिंगारनि सिँगारिबो।

उपरोक्त कवित्त में रूपमयी राधा के श्रृंगार का वर्णन है। सर्वप्रथम राधा ने दंत मंजन कर निर्मल पवित्र जल से स्नान कर स्वच्छ वस्त्र धारण किये और चरणों में महावर लगाकर अपने केशों को विशेष रूप से संवारा। इसके उपरांत सिन्दूर, बिंदिया, चिबुक (ठोढी) पर काले बिन्दु की रचना कर, शरीर पर चंदन लेप किया और हाथों पर मेंहदी रचाई। तदपश्चात् विविध आभूषणों से श्रृंगार किया। मुखवास को शुद्ध करने के लिये लवंग खाई और ताम्बूल एवं अधरों को लाल करके अपने नेत्रों में अंजन भरा। उसने इस प्रकार सोलह श्रृंगार किया, जैसे कोई पतिव्रता प्रिय के आने की प्रतिक्षा कर रही हो।

दतिया शैली के चित्रकार ने राधा को छः सखियों के मध्य गाव तकिये के सहारे चौकी पर अंगड़ाई लेते अंकित किया है। सम्मुख एक खड़ी सखी राधा को आरसी दिखा रही है जिसमें राधा का प्रतिबिम्ब पड रहा है। राधा के अमृतोमुख के अतिरिक्त उसके विकसित सरोज, उसके प्रभा उद्भासित नेत्र, और लाल वर्णीय अधर का चित्रकार ने उत्तम निरुपण किया है। उसने राधा के चिबुक पर इतना मनोरम काला तिल अंकित किया है जिसे देख श्रीकृष्ण का मन रूप के कूप में अवश्य गिर पड़ता होगा। उसके चरणों में लगे महावर से उसकी शोभा और बढ़ गई है। स्त्रियों का आभूषण प्रिय होना विख्यात है जिसका चित्रकार ने यथोचित अंकन कर राधा की शोभा में वृद्धि कर दी है। राधा का शीशफूल तो साक्षात सुहाग का क्षेत्र है जिसने (सिंदूर से भरी मांग) अनुराग को साथ ले लिया है। कान में ताटंक के अंकन से उसकी सुंदरता में छटा का समावेश हो गया है।

चित्र में सखियां पारदशी रंग-बिरंगे परिधानों में राधा के दोनों ओर खड़ी हैं। एक हाथ में हुक्का तो दूसरी हाथ में व्यंजन-भरी थाली। एक सखी पंखा लिये है जिसके आकर्षण से चित्र में गति उत्पन्न हो गई। चित्र अध्ययन से बोध होता है कि चित्रकार मध्यकालीन विलासिता से भी प्रभावित रहा है जिसने राधा को महारानी रूप देकर दासियों के हाथों में प्रसाधन निरूपित कर दिये हैं। रंगों के प्रयोग से चित्र की छटा निखर आई है।
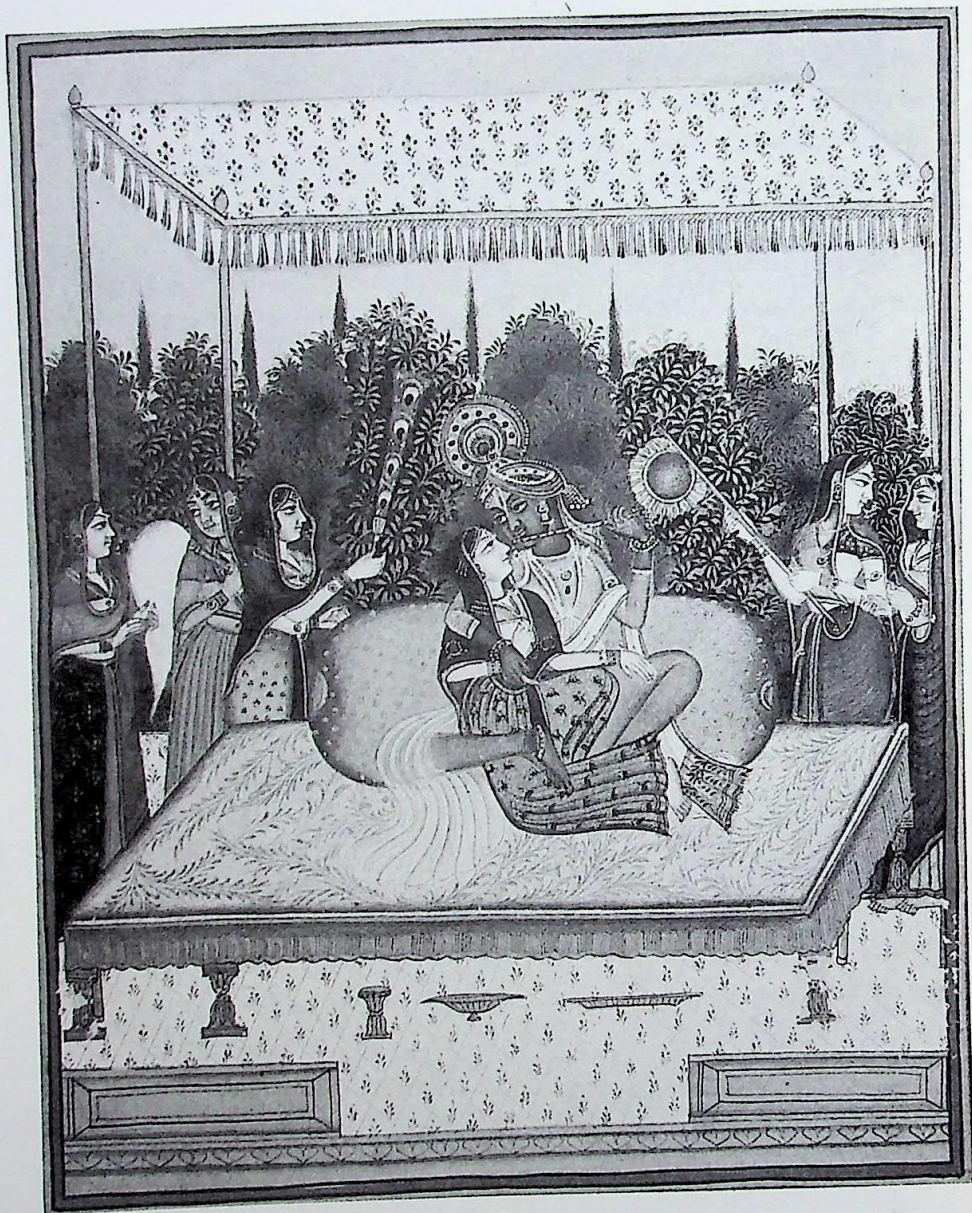
आनन्दमग्न राधा-कृष्ण

दतिया, बुन्देलखण्ड, लगभग 1780 ई.

आज बिराजत हैं कहि केसव श्रीबृषभानु-कुमारि कन्हाई।
बानि बिरंचि बहिक्रम काम रची जु बची सु बधूनि बनाई।
अंग बिलोकि त्रिलोक में ऐसी को नारि नहीं जिन नारि नवाई।
मूरतिवंति सिँगारि-समीप सिँगार कियें जनु सुंदरताई।

एक सखी दूसरी से कहती है कि आज श्री बृषभान की पुत्री राधा और श्रीकृष्ण आनन्दमग्न सुशोभित हो रहे हैं। ब्रह्मा ने वयः संधि की कामना कर राधा की सुन्दरता का कुछ अंश लेकर सरस्वती की रचना की और उसमें जो शेष बचा उससे संसार की अन्य रमणियों को सुन्दरता प्रदान की। राधा के अनिद्य सौंदर्य के आगे त्रिलोक में ऐसी कोई रमणी नहीं जो उसके समान सुन्दर हो। ऐसा प्रतीत होता जैसे साक्षात श्रृंगार (श्रीकृष्ण) के समीप सुन्दरता (राधा) अपना मूर्तरूप संवारे विराजमान हो।

यह सर्वविदित है कि बुन्देली कलम में दतिया के चित्रकार छवि चित्रण में मुगल चित्रकारों की तुलना में किसी दृष्टि से कम निपुण नहीं थे। यह चित्र इस तथ्य की पुष्टि करता है। प्रकृति की विपुल सुषमा के नैसर्गिक दृश्य में तकिये का सहारा लिए कृष्ण अनुरागी राधा को अपनी भुजाओं में समेटे आसन पर विराजमान हैं और उसका हाथ थामें उसके नेत्रों का रसपान कर रहे हैं। एक सखी दूसरी से वार्तारत होते हुए राधा कृष्ण को पंखा कर रही है। दूसरी ओर भी एक अन्य सखी इन्हें मोरछल से हवा कर रही है। चंवर लिए एक अन्य सखी पीछे से आई एक गोपी को ऐसे देख रही है मानो वह भी अभी-अभी वहां इस युगल-विहार को देखने आई हो। इस रस ने ही ब्रह्म के रूप को कृष्ण बना डाला है अन्यथा वह नीरस होकर केवल बुद्धि का विषय बना रहता, हृदय का नहीं बन पाता।

सखियों की स्वस्थ छवियों पर अंकित विशाल नेत्र और विविध वस्त्राभूषणों से हुई शोभावृद्धि देख दर्शक के हृदय में हर्षोल्लास अनायास उत्पन्न होता है जो कलाकार की कौशल विशेषता है। दतिया के राजा शत्रुजित् (1762-1801) के कार्यकाल में बुन्देलखण्ड चित्रकला ने एक नया रूप धरा और गहरे रंगों से बने चित्र अपना निजस्व व्यक्त करने में सक्षम हुए।
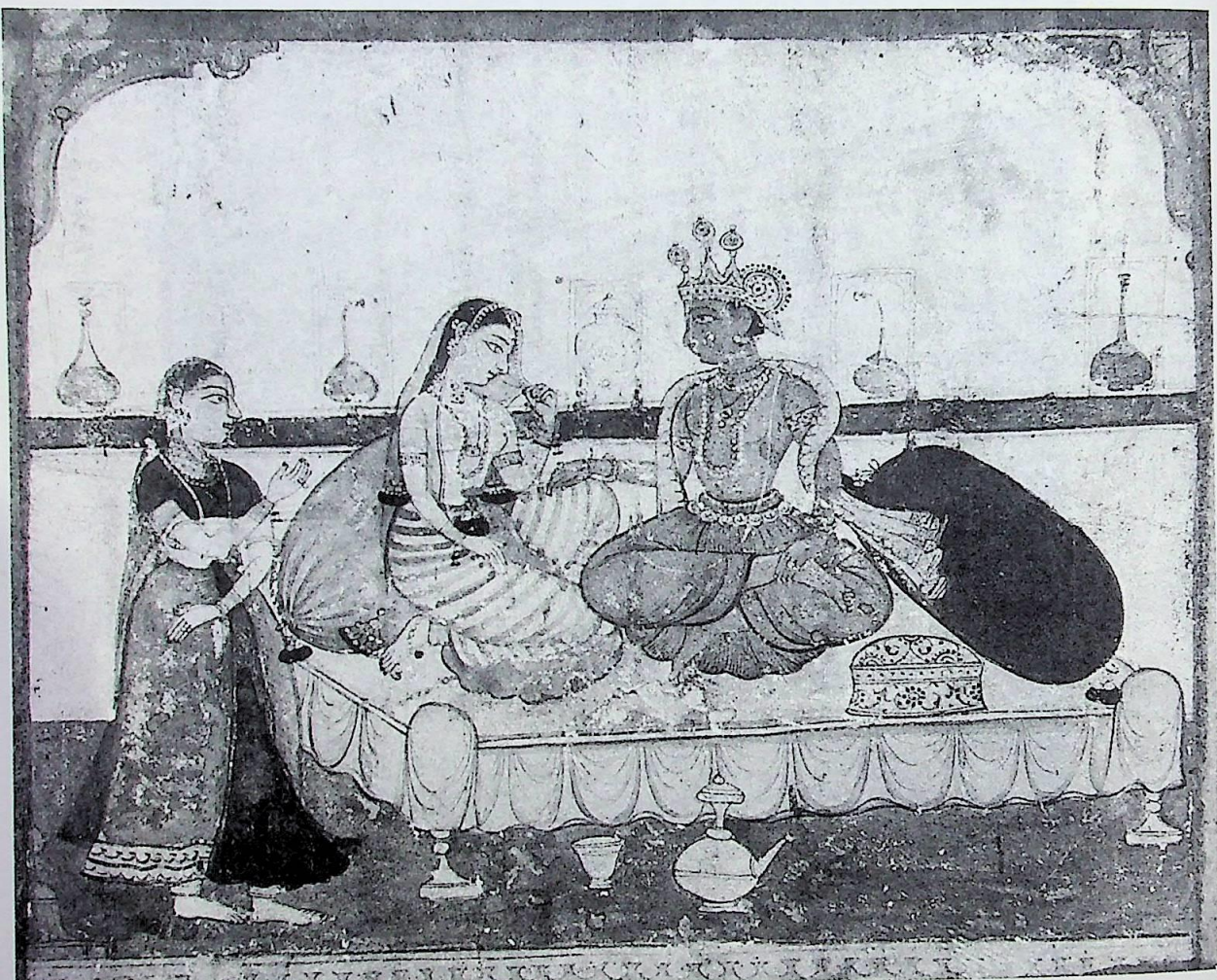
राधा कृष्ण का प्रथम मिलन

मुगल, लगभग 1605-1610 ई.

हॅसत खेलत खेल मंद भई चंददुति,
कहत कहानी और बूझत पहेली-जाल।
केसौदास नींदबस अपने अपने घर,
हरें हरें उठि गए बालिका सकल बाल।
घोरि उठे गगन सघन घन चहूँ दिसि,
उठि चले कान्ह धाइ बोलि उठी तिहिं काल।
आधी राति अधिक अँध्यारे माँझ जैहो कहाँ,
राधिका की आधी सेज सोई रहौ प्यारे लाल।

हंसते खेलते तथा कहानी और पहेलियां बूझते-बुझाते घोर अंधकार हो गया। मेघों के उमड़ने से चन्द्रमा की ज्योति भी मंद पड़ चुकी थी। नींद के झोकों के कारण सब गोपियां और ग्वाल भी धीरे-धीरे अपने-अपने घर चले गए। उधर आकाश में घनघोर घटा गरजने लगी तभी कृष्ण भी उठकर चलने लगे। उस अवसर पर धाय ने कृष्ण से कहा कि अर्धरात्रि के इस अंधकार में आप कैसे जा पाओगे। नंद लाल, तुम राधिका की आधी शैय्या पर ही लेट जाओ।

स्वर्ण मुकुट पहने कृष्ण राधा की सेज पर विराजे हैं जहां राधा एक हाथ से ओढ़नी थामे ऐसी संकुचित बैठी है जैसे केशरी के सम्मुख पड़ी हुई भयातुर मृगी की दशा होती है। पास खड़ी धाय के कारण राधा की परिस्थिति और संयोग ठीक उसी प्रकार लग रहा है जैसे गजराज के कंठ में कोमल मालती की पुष्पमाला। भाव की दृष्टि से रंग, आकार और विषय प्रस्तुति प्रभाव साम्य है।

उल्लेखनीय है कि आगरा में सम्राट अकबर से महाकवि केशव की भेंट होने के पश्चात् उनके द्वारा रचित रसिकप्रिया ग्रन्थ से प्रभावित हो, उसने अपने शाही चित्रशाला के कलाकारों द्वारा इस ग्रन्थ के अनेकों दोहों, छन्दों और कवित्तों पर आधारित ई. 1600-1605 के मध्य चित्रों का निर्माण कराया। अकबर के निधन के पश्चात् भी मुगल शैली में रसिकप्रिया पर आधारित चित्रण होता रहा। मुगल शैली के इन चित्रों में कृष्ण की छवि रज्मनामा चित्रों जैसी ही प्रतीत होती है। उनके मुकुट की प्रतिरूपता मुगल शैली के अनुरूप हुई है जबकि महिलाओं के परिधानों का अंकन भारतीय पद्धति के अनुरूप हुआ है। इस शैली के कुछ चित्र फाईन आर्ट म्यूजियम संग्रहालय, बोस्टन (अमेरिका) में भी संग्रहीत हैं।

वेणु माधव

बीकानेर, लगभग 1695ई.

चपला पट मोर किरीट लसै मघवा-धनु-सोभ बढ़ावत हैं।
मृदु गावत आवत बेनु बजावत मित्र-मयूर नचावत हैं।
उठि देखि भटू भरि लोचन चातक-चित्त की ताप बुझावत हैं।
घनश्याम घनाघन बेष धरे जु बने बन तें ब्रज आवत हैं।

सखी राधा से कह रही है कि हे सखी! आज कृष्ण का पीताम्बर ही बिजली सा लग रहा है। सिर पर सुशोभित मोर मुकुट समस्त वातावरण में इन्द्रधनुष जैसी शोभा बढ़ा रहा है। कृष्ण मन्द गति से मुरली बजा रहे हैं जिसकी धुन सुनकर उनके सखा मयूरों की भांति नृत्यमग्न हैं। उनका स्वर मेघ की मंद ध्वनि सा लग रहा है। हे! सखी, उठ और नेत्र भर कर उन्हें देख, वे हर चातक के चित्त का ताप दूर कर देते हैं। घनश्याम आज बरसने वाले मेघों का वेश धारण किए वन से बने ठने ब्रज की ओर आ रहे हैं।

वेणुवादन के द्वारा बरसाये गए पीयूष के पोषण से विकास प्राप्त प्रेम आसक्ति का रूप प्राप्त कर लेता है। उनका यह अनुग्रह ही प्रबल आकर्षण बनकर निःसाधन भक्तों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है।

माना जाता है कि बीकानेर शैली, मुगल कला में माधुर्य और बारीकी तथा राजस्थानी चमकीले रंगों एवं वहां के परिधानों के सम्मिश्रण से उपजी परन्तु अनुगामिनी होकर भी यह मुगल शैली में लुप्त नहीं हुई। कुछ मुगलिया दरबारी कलाकारों ने बीकानेर स्थानान्तरित होकर वहां के दरबार को छवि चित्रों से अलंकृत किया। रसिकप्रिया के श्रृंगारिक आख्यानों, रागमाला, और दुर्गा सप्तसती आदि विषयों पर इन कलाकारों ने चित्रण कर अपने धर्म का निर्वाह किया। नूरुद्दीन नामक चितेरे को रसिक प्रिया के चित्रों के निर्माण से साथ जोड़ा जाता है।

इस चित्र में कलाकार ने हिन्दू परिधान (धोती) और मुगलिया पगड़ी का अंकन कर धर्म निर्पेक्षता का परिचय दिया है। नारी परिधानों में कोमल रेखाओं ने उन्हें अधिक आकर्षक बना दिया है। वृक्षों की पत्तियों का अंकन, उनमें झांकते मयूर और गगन में घिरे मेघों से चमकती बिजली चित्र में वर्षा होने का स्पष्ट संकेत देते हैं। बीकानेर शैली के लघुचित्रों में आकाश को सुनहरे छल्लों से युक्त मेघाच्छादित दिखाया गया है। मेघ मालाओं का आकार गोल श्वेत और नीलाभ रंगों से युक्त है। नारी आकृतियां उत्तर मुगल शैली की नारियों के समन्वित स्वरूप की झांकी प्रस्तुत करती हुई-सी प्रतीत होती हैं। यही बीकानेरी कलाकार की सफलता है।

कृष्ण द्वारा राधा की उपेक्षा

मेवाड़, लगभग 1640 ई.

नीरहिं तौ बिन मीन सरै, अरु मीन तौ नीरहिं के जिय जीजै।
जा बिन और सुहाइ न केसव ताहि सुहाइ सु तौ सब कीजै।
जा लगि मो पग लागत हे सु लगी पग अंक लगाइ न लीजै।
हौं सिखऊँ अपने सपनेहूँ तौ आवत लच्छि किवार न दीजै।

सखी कृष्ण से कह रही है कि हे माधव! जल का काम तो बिन मीन निकल जाता है परन्तु बिना जल के मीन पल भर भी जीवित नहीं रह सकती। इसी प्रकार आपका काम राधा के बिना चल सकता है परन्तु राधा की दशा मीन जैसी है। कई बार कोई अच्छी बात नहीं लगती परन्तु दूसरे को यदि अच्छा लगे तो करना ही पड़ता है। पहले आपको राधा के बिना चैन नहीं पड़ती थी, अब उसको आपके बिना चैन नहीं पड़ती। पहले जिसे मिलने के लिए आप मेरी विनती करते थे, अब वही (राधा) आपके पैरों में पड़ी है उसे आप गले क्यों नहीं लगा लेते ? आप मान जाइये भला स्वप्न में आती लक्ष्मी के लिए भी कोई किवाड़ लगाता है।

राधा के लिये कृष्ण का मान करना अति कष्टदायी है, परन्तु बिना मान के स्नेह और बिना स्नेह के मान नहीं होता। दोनों एक दूसरे के रंजक हैं। मान मिश्री की भाँति है जो छूने पर कठोर, किन्तु उसके सरस स्वाद को रसना ही जानती है। चित्रकार ने इस सवैये के चित्रांकन में अनेक उपमान अंकित कर इसको अर्थबोध देने का प्रयास किया है। आकर्षक भवन की मुंडेर पर मयूर अंकित है जो सदा स्वच्छन्द ठीक उसी प्रकार विचरण करता है जैसे श्रीकृष्ण के विषय में उपरोक्त उल्लेख हुआ है। नीचे जलकुण्ड में कुछ मछलियां भी ''जल बिनु मीन'' की युक्ति के लिए चित्रित की गई हैं एवं एक मृत मीन जल कुण्ड के बाहर राधा की दशा दर्शाती है। मुख्य दृश्य में श्रीकृष्ण आसनारूढ़ और राधा उनके पांव पड़ती अंकित की गई है। उसके पीछे खड़ी सखी श्रीकृष्ण को मान जाने का संकेत करती दिखाई देती है।
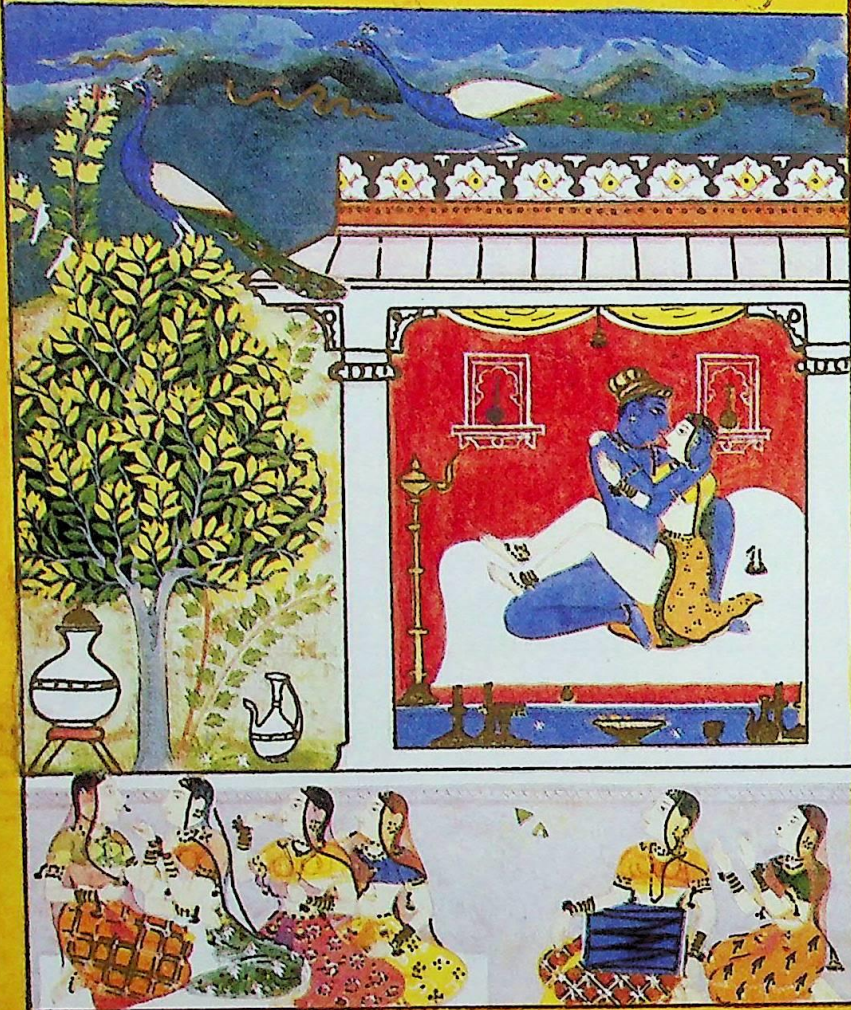
राधा-कृष्ण का रमण

मेवाड़ लगभग 1640 ई.

घननि की घोर सुनि, मोरनि को सोर सुनि,
सुनि सुनि केसव अलाप अलीजन को।
दामिनी दमक देखि देह की दिपति देखि,
देखि सुभ-सेज देखि सदन सुबन को।
कुंकुम की बास, घनसार की सुबास भयो,
फूलनि की बास, मन फूलिकै मिलन को।
हँसि हँसि बोले दोऊ, अनहीं मनाँए मान,
छूटी गयो एकै बार राधिका रमन को।

घनघोर घटा और बिजली की गड़गड़ाहट के साथ साथ मृदु समीर के हल्के झौंके, मयूर गान और सखियों के मधुर संगीत की इस बयार ने राधा को इतना आनन्दोन्मत्त कर दिया कि वह बिन मनाये ही केसर-कपूर से सुगन्धित शैय्या पर श्रीकृष्ण से रमन हेतु जा पहुंची।

जैसे सांप केंचुल छोड़ता है वैसे ही राधा की देह प्रेम मग्न हो आंख, कान, मुख आदि सबकी पहचान छोड़ "पूरन नेहु" प्रकट करती भुजा-गुंफल में झूलती अंकित की गई है। कौन प्रेमी और कौन प्रेमिका, स्नेह रूप में देह का नया जन्म। काम ही अपनी संपूर्णता और निःशेषता में प्रेम बनता है। माधुर्य भाव की रमणीयता में भाव की दिव्य आत्मा कभी कलुषित नहीं हो सकती। काम-केलि के इस चित्र में यही भाव कलाकार ने सूक्ष्म दृष्टि से अंकित किए हैं।

मेवाड अपने वैभव काल में बहुत उन्नतिशील हिन्दू कला का केन्द्र रहा। कलाकार ने इस चित्र में तृप्ति और उल्लास अथवा प्रकृति और मन का मिथुनिकरण (मन कृष्ण है और प्रकृति राधा) का बड़ा सटीक एवं काव्यात्मक अंकन किया है। इसमें रंगो का मिश्रित वैभव अनूठा है जो उपरोक्त शैली की निजी विशेषताएं है। केशव रचित इस कवित्त का प्रसिद्ध चित्रकार साहिबदीन ने काव्य-कल्पित रूप-यौवन तथा मांसल सौन्दर्य के साथ-साथ प्रकृति चित्रण कर चित्र में जादू भर दिया है।

॥ ४ ॥ असाढ ॥
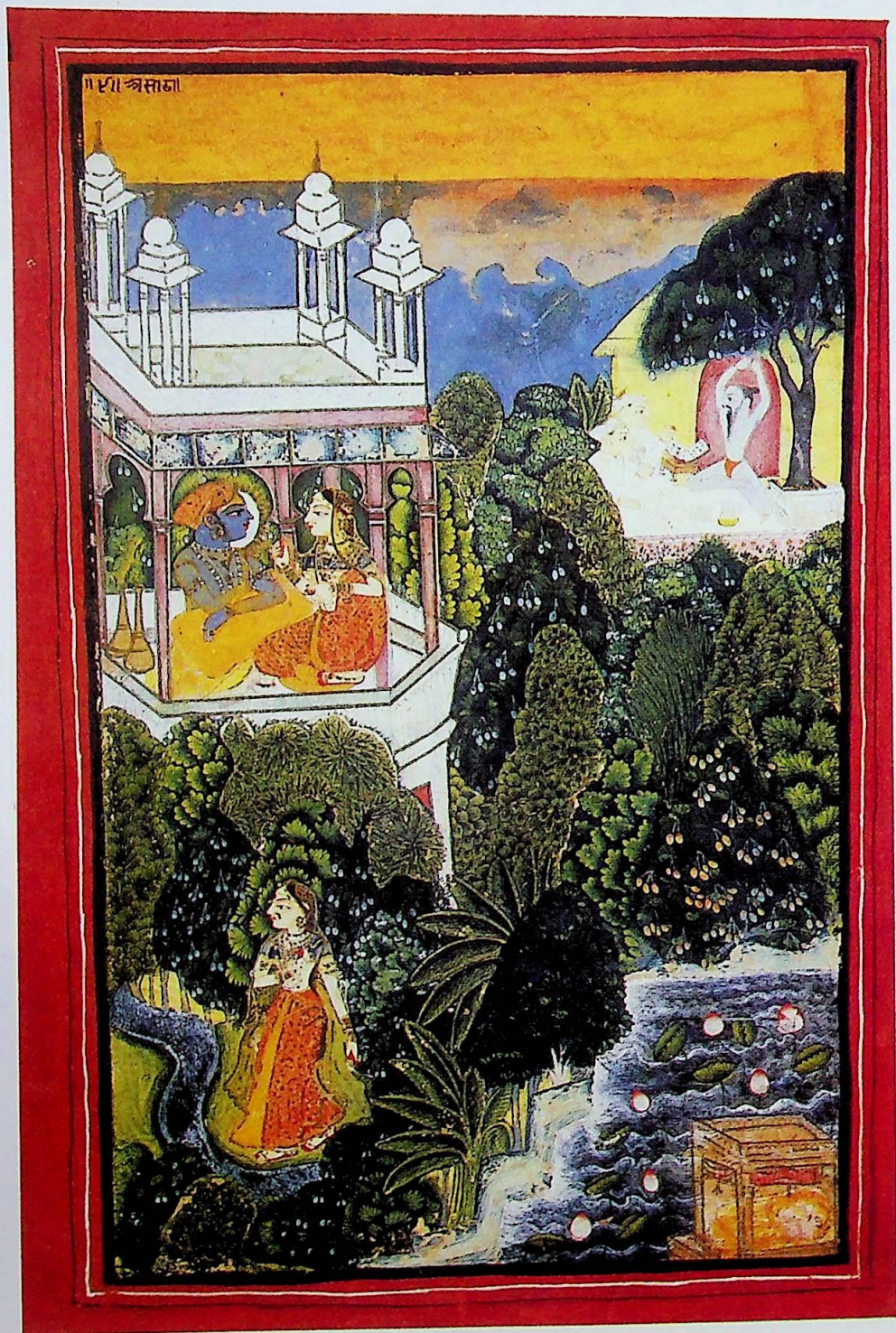
आषाढ़

कोटा, लगभग 1725 ई.

पवन चक्र परचंड चलत चहुँ ओर चपल गति।
भवन भामिनी तजत, भ्रमत मानहुँ तिनकी मति॥
सन्यासी इहि मास होत, इक आसन बासी।
पुरुषन की को कहै, भए पच्छियौ निवासी॥
इहि समय सेज सोवन लियौ, श्रीहिं साथ श्रीनाथ हूँ।
कहि "केसवदास" आसाढ़ चल, मैं न सुन्यौ श्रुति गाथ हूँ॥

आषाढ़ के महीने में चारों ओर लू भरी तेज हवाएं चलती हैं। ऐसे मौसम में केवल चंचल चिंत्त व्यक्ति ही अपनी पत्नी और घर त्याग कर बाहर जाता है। यहां तक कि सन्यासी भी एक स्थान पर एकासन लगाकर बैठ जाते हैं, पुरुषों की बात तो दूर की है, पक्षी भी अपने घौंसले नहीं छोड़ते। भगवान् विष्णु श्रीलक्ष्मी के साथ क्षीर सागर में विश्राम करने लगते हैं। कवि केशव कहते हैं कि वेदों अथवा श्रुतियों में पुरुषों के आषाढ़ माह में घर त्यागने का उल्लेख नहीं है।

कोटा के चित्रकार ने चित्र में सघन कुंज का नैसर्गिक दृश्य अंकित कर केशव द्वारा आषाढ मास के भावों को अभिव्यक्ति दी है। कुंज में कदली और आम्र वृक्ष ऋतु के उल्लास को व्यक्त करते प्रतीत होते हैं जिनमे विविध पक्षियों के कलरव से श्रवणों को पोषण मिलता है। तड़ाग में विकसित सरोज को देख मन मनोज-मुदित हो जाता है। एक ओर कुटी में योगी सम्मुख बैठे भक्तों से योग विधि के विषय में वार्तारत है। दूसरी ओर प्रथम खण्ड की छतरी में राधा कृष्ण से वार्तारत है जिसे वे हाथ पर हाथ रखे बड़े ध्यान से सुन रहे हैं। संभवतः राधा उन्हें आषाढ़ मास का महत्व बताने वहां अकेली पहुँची है और इस मास में उन्हें घर से बाहर न जाने का आग्रह कर रही है। गौरवर्ण राधा के सम्मुख श्याम बिहारी के उराभूषणों की चमक ठीक उसी प्रकार से है जैसे रूप के सरोवर में मैन की तरंगें उठ रही हों। वास्तुकला के पक्ष को भी कलाकार ने अछूता नहीं छोड़ा है। इसमें भी उसने त्रियामी प्रभाव उकेरा है।

विषय के अतिरिक्त यह उल्लेखनीय है कि आषाढ़ मास में ही बारहमासा की रचना का आरंभ हुआ था। इससे पूर्व महाकवि कालीदास ने मेघदूत काव्य का आरंभ भी आषाढ़ मास में ही किया था।
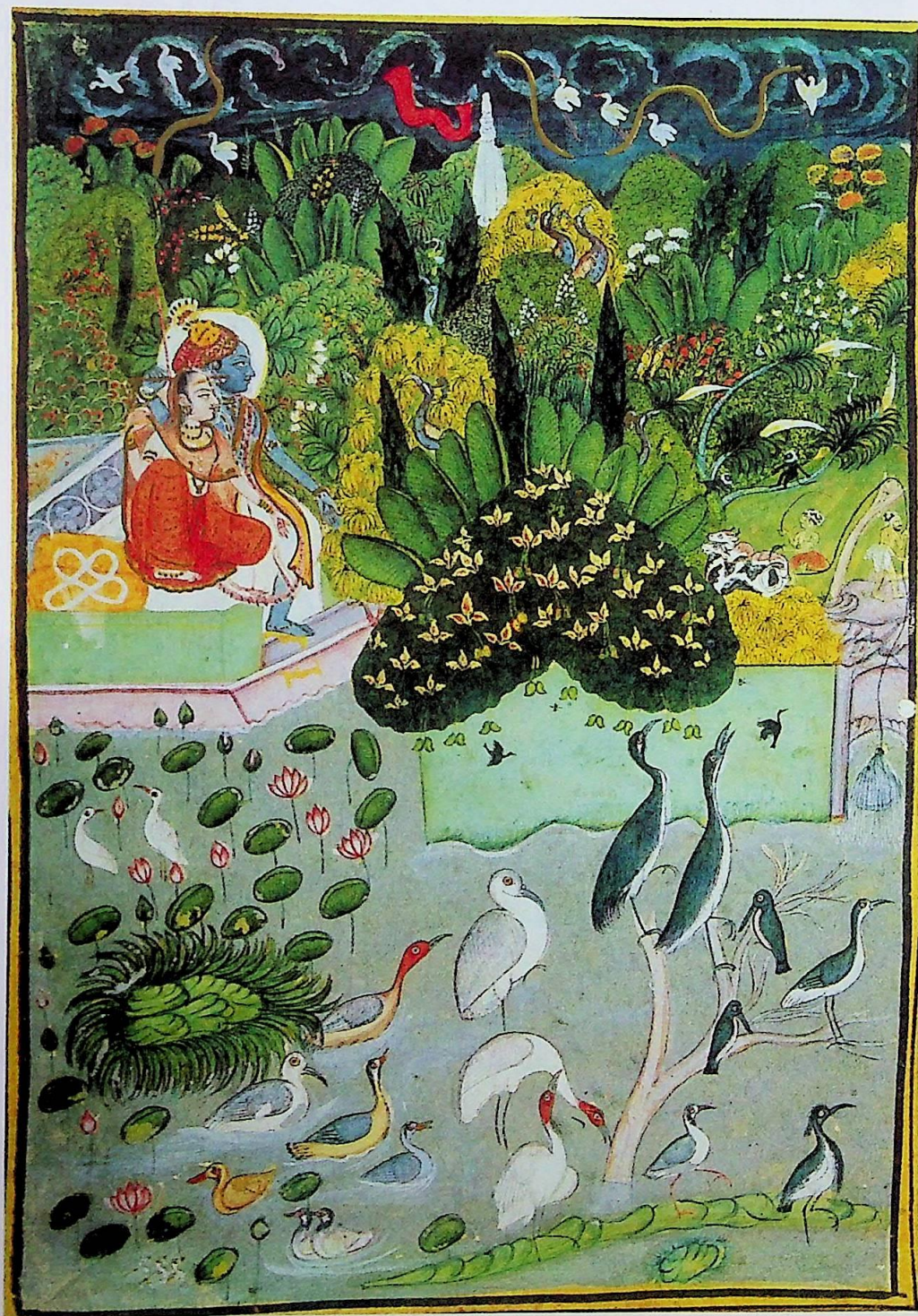
श्रावण

कोटा, लगभग 1750 ई.

'केसव' सरिता सकल, मिलत सागर मन मोहै ।
ललित लता लपटाति, तरुन तन तरुबर सोह ॥
रुचि चपला मिलि मेघ, चपल चमकत चहुँ ओरन ।
मन भावन कहँ भेंट, भूमि कूजत मिसि मोरन ॥
इहिं गमन की को कहै, गमन ल सुनियत सावनै ॥

श्रावण मास में पावस-ऋतु अपने चर्मोत्कर्ष पर होती है । कवियों ने इस मास को वर्षा के आगमन से नायिका (राधा) और नायक (कृष्ण) के अलौकिक प्रणय को अधिक रसमय बना दिया है । कवि केशव कहते हैं कि श्रावण मास में वर्षा से नदियों में बाढ आने से समुद्र में मिलते दृष्य को देख कितना सुखद आनन्द होता है । छोटे-छोटे जीव-जन्तु वर्षा से प्रसन्न हो वृक्षों पर विहार कर रहे हैं । बिजुरी कड़क कर बादलों से झांकती प्रतीत होती है । मयूर वर्षा से प्रसन्न हो धरती और आकाश के मिलन की मधुर स्वर से पुकार कर रहे हैं । इसी प्रकार प्रेमी-प्रेमिका के मिलन का यह मास कब किसे घर से बाहर जाने को कहेगा ।

श्रावण के इस प्रसंग पर विविध शैलियों के कलाकारों ने अपने ढंग से चित्रण कर उपरोक्त भाव को व्यक्त करने का प्रयास किया है । कोटा शैली के इस चित्र में तड़ाग के किनारे एक चबूतरे पर बैठे नायक-नायिका को वर्षा का स्वागत करते चित्रित किया गया है । घनघोर घटाओं में चमकती बिजली, गगन विहार करते विभिन्न पक्षियों और मग्न सारस यह संकेत दे रहे हैं कि वर्षा शीघ्र ही पृथ्वी की प्यास बुझाने को आतुर है । कदली वृक्ष के पत्ते भी इस सुरम्य बयार को गति प्रदान करने में सहायक हैं । कृषक भी अपने हल लेकर खेतों की ओर अग्रसर हैं । परन्तु कांगड़ा शैली के चितेरों ने सावन के स्वागत में एकदम भिन्न दृष्टिकोण अपनाया, उनकी कल्पना में विजुरी के चमकते ही काली घटा देख विहंग आकाश में उड़ने लगे हैं । बिजुरी की भंयकर ध्वनि और प्रकाश के भय से अटारी में बैठी नायिका, नायक की भुजाओं में सिमट कर बैठ गई है अथवा इस मनोरम दृश्य को देख उन्मत्त हो उसने नायक के गले में अपनी बाहें डाल दी हैं । इस सुहानी ऋतु में प्रतीक्षारत तरुणि अपने प्रिय की उसी प्रकार प्रतीक्षा करती है जैसे छज्जे पर बैठी मयूरी अपने मयूर की प्रतीक्षा में हो, जिसकी ध्वनि सघन कुंज में से कभी-कभी सुनाई पड़ जाती है ।
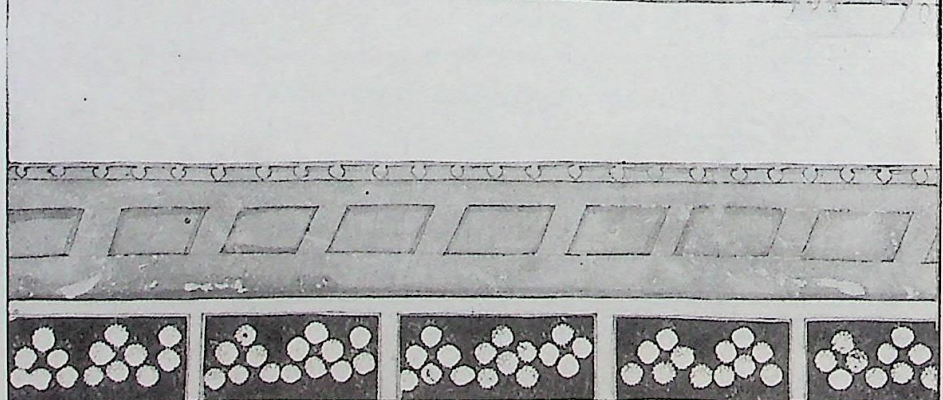
भाद्रपद

जोधपुर, लगभग 1780 ई.

घोरत घन चहुँ ओर, घोष निर्घोषनि मंडहि ।
धराधर धर धरनि, मुसल धारन जल छंडहि ॥
झिल्ली गन झनकार, पवन झुकि झुकि झकझोरत ।
बाघ-सिंह गुंजरत, पुंज कुंजर तरु तोरत ॥
निसि दिन विशेष निहि सेष मिटि, जात सुओली ओडिऐ ।
देसहिं पियूष परदेस विष, भादौं भौन न छोडिए ॥

घनघोर घन चारों ओर गर्जन कर रोषपूर्ण बरस रहे हैं। तीव्र बयार में भी दादुर गान स्पष्ट सुनाई देता है। सिंह और चीतों के गर्जन के अतिरिक्त मदमस्त हाथियों द्वारा वृक्षों को धराशायी करना यथावत बना हुआ है। दिन और रात काली घटाओं के कारण एक समान दिखाई देते हैं। केशव का कथन है कि इस माह में घर छोड़ना उचित नहीं। स्वतः का घर स्वर्ग (Nector) समान दिखता है। ऐसी स्थिति में प्रिय का गेह गमन मृत्यु के समान दिखाई देता है।

जोधपुर के चितेरे ने हरे और पीले रंगों से इस चित्र को भावुकतापूर्ण सजाया है। प्रिया की मनुहार है कि उसका प्रेमी इस मौसम में घर से बाहर न जाये परन्तु युद्ध की दुन्दवी सुन, योद्धा रणभूमि में अविलम्ब जाने को आतुर है। समर भूमि ही योद्धा का पवित्र स्थल माना गया है। इसी लिये उसकी प्रिया मुख्य द्वार तक उसे विदा करने आई है। चित्रकार ने स्थापत्य में जोधपुर की विविध अट्टालिकाओं और हवेलियों का अंकन कर दर्शक को इतिहास के पन्ने उलटने को बाध्य कर दिया है। चमकती बिजली के प्रकाश में गज-झुड़ वर्षा में उन्मत हो वृक्षों को घराशायी कर रहे हैं। वन-राज भी जहां तहां वर्षा का स्वागत कर आनन्द मग्न हैं।
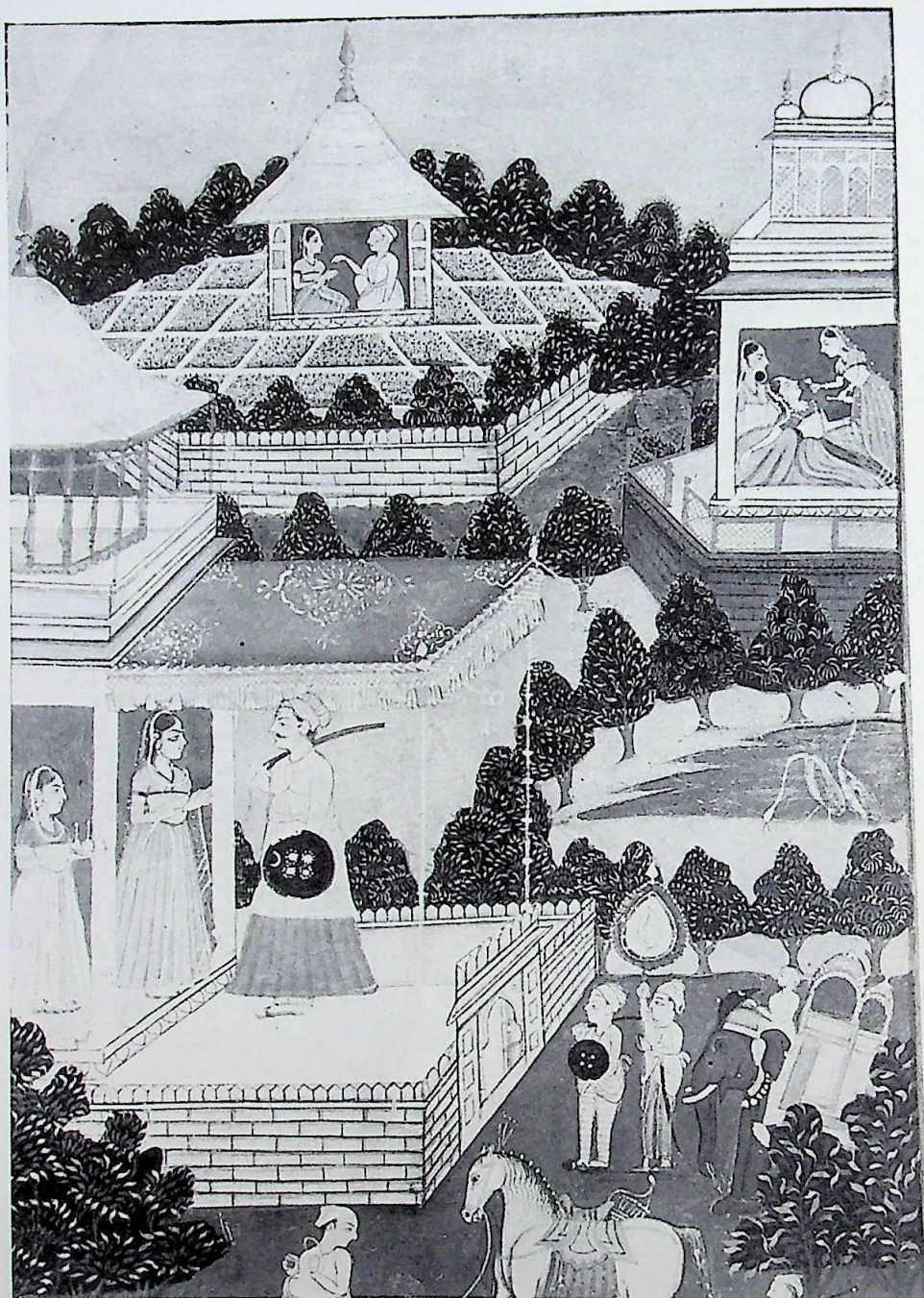
कार्तिक

दतिया, बुन्देलखण्ड, लगभग 1770 ई.

बन-उपवन, जल-थल अकासु, दसिंत दीपगन ।
सुख ही सुख दिन-रात, जुवा खेलत दंपति जन ॥
देव चरित्र विचित्र, चित्र चत्रित आगन-घर ।
जगत-जगत जगदीस, जोति जगमगति नारि-नर ॥
दिन दान-न्हान गुन-गान हरि, जनम सफल करि लीजिए ।
कहि ''केसवदास'' विदेस मत, कंत न कातिक कीजिए ॥

सघन वन, उद्यान, नदी, नीर, पृथ्वी एवं आकाश सब निर्मल और स्वच्छ दिखाई दे रहे हैं । चहुँ ओर दीपशिखा प्रकाशमान है । दिन रात उन्मत्त प्रेमी युगल जीवन का जुआ खेलने में व्यस्त हैं । गृहों के भीतरी भाग देवी-देवताओं के चित्रों से मंडित हैं । यह पवित्र स्नान का मास है जिसमें भगवत भक्ति प्रमुख और शिव-पूजन प्रधान्य है । केशव का कथन है कि इस पावन मास में प्रीतम को घर से प्रस्थान नहीं करना चाहिए ।

दतिया शैली के चितेरे ने इस चित्र में समकालीन परिस्थितियों को कविता से संबधित कर दोहे का चित्रण किया है । बुन्देली धरा पर सदा युद्ध का प्रकोप छाया रहता था जिस कारण प्रायः सभी उत्सवों और त्योहारों पर निरन्तर पुरुष वर्ग मातृभूमि हित योद्धारूप में ही विचरते थे । कार्तिक मास के इस चित्र में भी युद्ध को प्रस्थान करने से पूर्व योद्धा अपनी प्रिया से विदा ले रहा है । नीचे उद्यान में उसके अंगरक्षक, अश्व और हाथी की सवारी सहित उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं । चित्र के पृष्ठ भाग में वार्तामग्न प्रेमी-युगल को चित्रित किया गया है । रेखाओं की बारीकी और हल्के-गहरे रंगों के ताल-मेल ने इस चित्र की आभा को द्विगुणित कर दिया है ।

मार्गशीर्ष

कांगड़ा, लगभग 1800 ई.

मासन में हरि-अंस कहत यासों सब कोऊ।
स्वारथ-परमारथन देत, भारथ में दोऊ॥
'केसव' सरिता-सरित, फूल फूले सुगंध गुर।
कूजत कुल का हंस, कलित् कल हंसनि के सुर॥
दिन परम नरम सीतल, गरम करम-करम ये पाइयतु।
करि प्राननाथ परदेस कों, मारगसिर मारग न चितु॥

वर्ष के सब महीनों में मार्गशीर्ष माह ही ईश्वर को अति प्रिय है। यह मास प्रसन्नता एवं मोक्ष प्राप्ति का है। कवि केशव का कथन है कि इस माह में सरिताओं और तड़ागों के किनारे पुष्पित पुष्पों पर तरुणाई छाई रहती है और हंसों की ध्वनियों से वातावरण गुंञ्जित रहता है। इस माह में न दिन अधिक शीतल होते हैं और न ही अधिक गरम। यह ऋतु युगल-प्रेमियों के लिये अति सौभाग्यशाली कहनी चाहिये। प्रेमिका अपने प्रेमी से आग्रह करती है कि इस सुहाने माह (मार्गशीर्ष) में मुझे अकेली छोड़कर मत जाओं, तुम्हें मेरे स्नेह की सौगन्ध।

कांगड़ा शैली के इस चित्र में सृजनोत्साह से अनुप्राणित कलाकार की कल्पना सहज ही की जा सकती है। देदीप्यमान राधा अगहन (मार्गशीर्ष) मास की विशेषताओं का वर्णन कर श्रीकृष्ण से अपने मनोभावों को व्यक्त कर कहती है कि मैं तो आपके समक्ष आत्मसमर्पण कर चुकी हूं, ऐसे में मुझे अकेली छोड़कर आपको बाहर नहीं जाना चाहिए। प्रणयिनी-सी राधा कृष्ण से इस कृपा की कामना करती है जिसकी संभवतः श्रीकृष्ण ने कल्पना भी नहीं की होगी, तभी किंकर्तव्यविमूढ हो वे उसे निहार रहे हैं।

राधा के आभूषणों से उसकी सौन्दर्यशोभा का वर्णन असीमित हो गया है। कुंदन में रत्नों से खंचित कान में तर्योना (कर्णफूल) की आभा कम नहीं। कंठ में कंठश्री के अतिरिक्त दुलरी की अपनी ही शोभा है। नीलमणि से निर्मित चूड़ियों के अतिरिक्त पारदर्शी चुनरी से झांकते श्रीफलों ने उसके लावण्य को द्विगुणित कर दिया है। उधर श्रीकृष्ण के मुकुट पर मयूर पंख लग जाने से वह उनके स्वच्छंद और उन्मुक्त विचरण का संकेत देने लगा है यद्यपि केसर के तिलक से शोभा निखर उठी है। नेत्रों में भी अंजन रेखा न्यारी लगती है। उनके कंधे पर पीतवस्त्र (दुपट्टा) अंकित कर कलाकार ने उनके घर से बाहर जाने का संकेत किया है। उनके उत्तरांग में तनसुख का "बागा" भी अत्यंत शोभायमान लगता है। चित्रकार ने इस मास की विशेषताओं का गूढ़ अध्ययन कर सूक्ष्मतम विधि से चित्र को सीमित रेखाओं और रंगों से उभारने का प्रयास किया है।
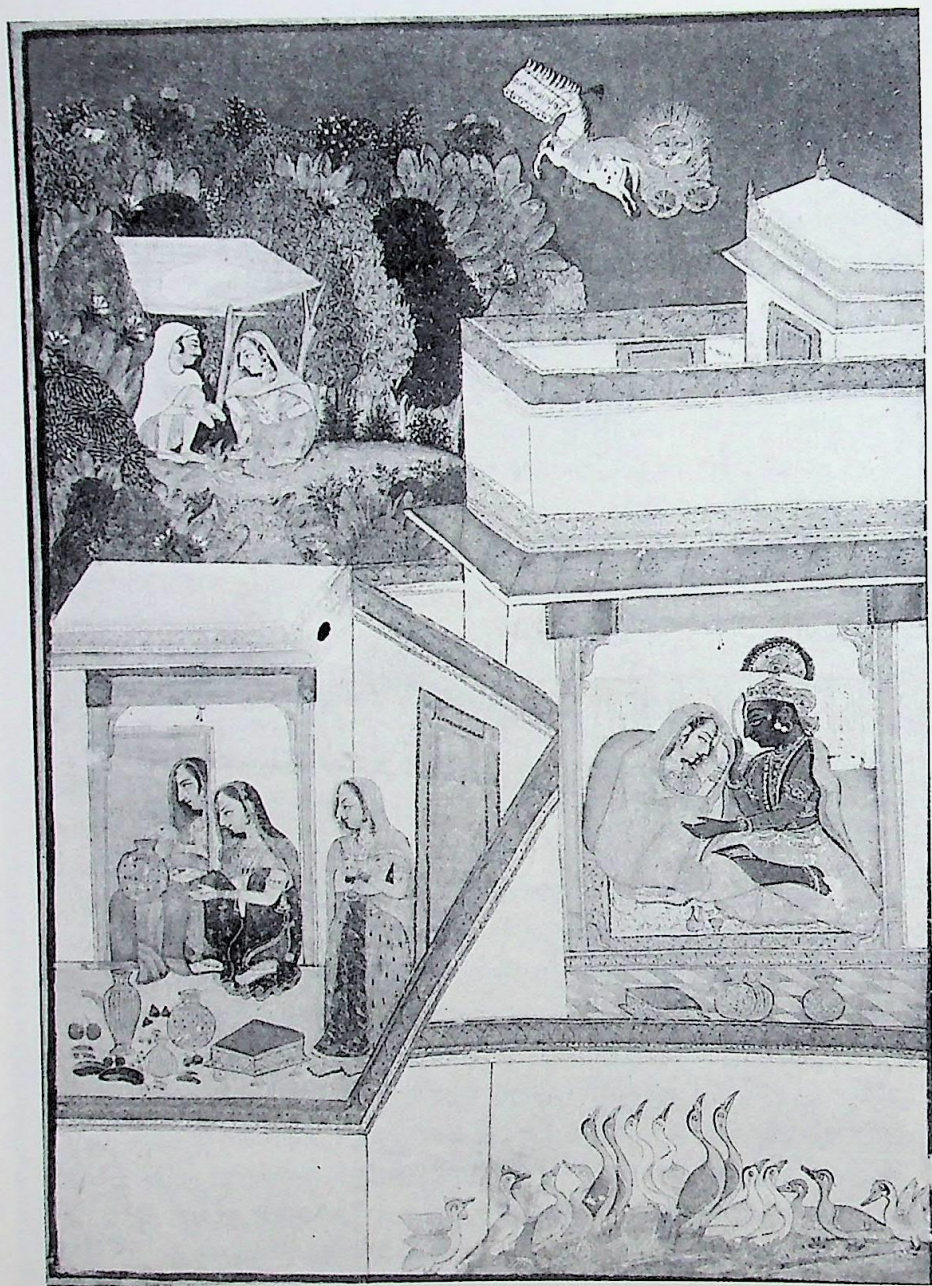
पौष

कोटा, लगभग 1750 ई.

सीतल जल-थल-बसन, असन सीतल अनरोचक।
'केसवदास' अकास-अवनि सीतल असु-मोचक॥
तेल-तूल-तामोल, तपन-तापन, नव नारी।
राज-रंक सब छोड़ि करत इनहीं अधिकारी॥
लघु द्यौस, दीह रजनी खनन, होत दुसह दुख रूस में
यह मन-क्रम-बचन बिचारि पिय, पंथ न बूझिये पूस में॥

पौष माह में ठंडी वस्तुएं किसी को नहीं भाती, भले ही जल, भोजन, वस्त्र अथवा घर ही क्यों न हो क्योंकि इस मास में आकाश तथा पृथ्वी तक शीतल पड़ जाते हैं। इस ऋतु में धनी वर्ग अथवा कृपण लोग तेल-मालिश प्रसन्न होकर करते हैं। हर प्राणी कपासयुक्त वस्त्रों को रूचि से पहनता है। सभी वर्ग के लोग लकड़ी जलाकर अपने अपने घरों का तापमान सामान्य बनाये रखते हैं। शरीर को गरम रखने के उद्देश्य से ताम्बूल का प्रयोग भी बहुतायत से होता है और धूप शरीर को अति प्रिय लगती है। इस माह के दिन छोटे और रातें बड़ी होती है, इसलिये यह मास प्रेमी प्रेमिकाओं के मिलन के लिये अति उपयुक्त होता है। कवि केशव ने इस भेद को समक्ष रख प्रेमी प्रेमिकाओं को इस माह में घर से बाहर न जाने की सीख दी है।

कोटा शैली के इस चित्र में तीन दृश्य अंकित हैं। ऊपर सूर्य देवता आकाश में सप्त अश्वों के रथ पर आरूढ़ हो शीध्र प्रस्थान करते अंकित हैं। जिससे इस माह में छोटे दिन और बड़ी रातें होने का संकेत मिलता है। नीचे वाटिका में एक झोपड़ी के नीचे कृषक दंपत्ति संध्या में आग जलाकर तापते हुए वार्तारत दिखाई देते हैं। मुख्य दृश्य भवन का है जिसमें मुकुट धारी घनश्याम के समीप बैठी राधा को और निकट आ जाने का संकेत दे रहे है। राधा शीत के कारण अपना ही उत्तरांग ओढ़े सिमटी बैठी है। जिससे ठंड अधिक होने का बोध होने लगा है। तीसरे दृष्य में सखियां चूल्हें पर कुछ ऐसा पेय बनाने में व्यस्त हैं जिसके पान से शरीर में सर्दी का प्रभाव दूर हो जाता होगा। चारदीवारी के बाहर कुछ ठिठुरी बत्तखें उपर को मुख किये कुछ खाने की अपेक्षा कर रहीं हैं। विविध रंगों के संयोग से चित्र में जो आकर्षण उत्पन्न हो गया है वह कलाकार की तीव्र बुद्धि का परिचायक है।

फाल्गुन

दतिया, बुन्देलखण्ड, लगभग 1780 ई.

लोकलाज तजि राज-रंक, निरसंक बिराजत।
जोई आवत सोइ कहत, करत पुनि हँसत न लाजत ॥
घर-घर जुवती ज्वान जोर गहि, गाँठिनि जोरहिं।
बसन छीनि मुख मींड़ि, आँनि लोचन तृन तोरहिं ॥
पट बास सुबास अकास उड़ि, भू मंडल सम मंडिये।
कह ''केसवदास'' बिलास निधि फागुन फाग न छंड़िये ॥

फाल्गुन रसमय मास है जिसकी रंजन वृत्ति उसे ऋतुराज के पद पर प्रतिष्ठित कर देती है । यह काम का मित्र और रति का मुहलगा देवर कहा जाता है जिसमें ''सावरे के रंग डूब गई गोरी और गोरी के रंग में डूब गयो सांवरों'' । फाल्गुन के सुरभित, पुष्पजटित सिंहासन पर आसीन ऋतुश्री वसंत अपनी मन भावन छटाएं बिखेरने लगता है । कृष्ण के साथ रस-विलास में रत राधा ब्रज-बालाओं के मध्य इस बुन्देली चित्र में होली के रसरंग में डूबी हुई है । फागुन की बयार में कृष्ण ने एक मुट्ठी गुलाल बिखेर दी है । राधा के आंचल से जिसका लाल रंग छन-छन कर चोली पर पहुंचते ही उसका गुलमोहर दमक उठा है और रंग-बिरंगी हो सुरमई हवा में राधा अंगड़ाई लेने लगी है । कृष्ण के स्पर्श से राधा के तन का रोम-रोम झंकृत हो उठा है ।

फागुन यौवन का दूसरा नाम है जिसमें वासन्ती अल्हड़ता व कोमलता की कली उन्मादित यौवन में परिवर्तित हो, फूल बन जाती है । इस मास में चपल बन पाखियों के स्वच्छंद अनूठे स्नेहसिक्त शहदीले स्वर भी सघन कुंज में आल्हादमयी ध्वनियों से तरंगित हो उठे हैं । कवि केशव का कथन है कि इस उन्माद भरे मास में फाग (होली) अवश्य खेलें ।

दतिया शैली के बुन्देली चितेरे ने इस चित्र में क्रमबद्ध वृक्षों के सघन कुंज का दृश्य चित्रण कर केशव के दोहे का सशब्द अंकन किया है । परिधानों के अतिरिक्त गोपियों के केश जिस प्रकार चित्रित किए हैं वह केवल बुन्देली शैली में ही देखने को मिलते हैं

चैत्र

कांगड़ा, लगभग 1800 ई.

फूलीं ललिता ललित, तरून तन फूले तरुवर।
फूलीं सरिता सुभग, सरस फूले सब सरवर॥
फूलीं कामिनि कामरुप, करि कंतहि पूजहिं।
सुक-सारी कुल केलि, फूलि कोकिल कल कूजहिं॥
कहि "केसव" ऐसे फूल मँह, सूल न हिये लगाइये।
पिय आप चलन की को कहै, चित्त न चैत चलाइये॥

चित्र में नायक-नायिका छत पर बैठे तडाग के किनारे एकान्त में हरे-भरे पेड़ों पर चहकते पक्षियों के विविध स्वरों का आनन्द ले रहे हैं। वृक्षों पर फल-फूल लगे हैं, तालाबों में कमल खिले हैं, कल-कल करते झरनों के किनारों पर फूलों की सुगन्ध फैली है। तोता, मैना और कोयल तक ने प्रेम-राग अलाप करना आरम्भ कर दिया है। सुदूर ग्राम्य दृश्य भी दर्शनीय है। स्त्रियां विविध श्रृंगार कर अपने यौवन को संभाल पाने में असमर्थ हो प्रेम-प्रणय में तल्लीन होना चाहती हैं। नायिका इन सबका वर्णन कर चैत्र मास की महत्ता बताते हुए नायक से कह रही है कि उसे इस मास में घर से बाहर प्रस्थान नहीं करना चाहिए।

केशव ने चैत्र मास की जो कल्पना की है उसमें प्रकृति के साथ-साथ नायिका के गदराये यौवन को भी चित्रकार ने अनुपम सौन्दर्य प्रदान किया है। हरे और सफेद रंगों से ऋतु की विविधता को दर्शाने में कांगड़ा कलाकार की सफलता पर प्रशंसा के शब्द अनायास ही निकल पड़ते हैं। उल्लेखनीय है कि यह चित्र कांगड़ा के कलाकारों के प्रश्रयदाता राजा संसारचंद (1773-1813) के संग्रह का है।

।मतीनोंजे ठरो

ज्येष्ठ

जोधपुर, लगभग 1800 ई.

एक भूत में होत, भूत भज पंचभूत भ्रम।
अनिल-अंबु-आकास, अवनि-हवै जाति आगि सम॥
पंथ थकित मद मुकित, सुखित सर सिंधुर जोवत।
काकोदर करि कोस, उदरतर केहरि सोवत॥
पिय प्रबल जीव इहि बिधि अबल, सकल विकल जल थल रहत।
तजि ''केसवदास'' उदास मग; जेठ मास जेठहिं कहत॥

जोधपुर कलम के इस चित्र में योद्धा रूपी नायक के सम्मुख सुन्दर छबीली नायिका अपनी सेज त्याग नायक को ग्रीष्म की तपती धूप में जाने से रोक रही है। पीछे खड़ी सखी पंखों से हवा कर रही है। सूर्य इतना गरम है की पांचों तत्व (हवा, पानी, आकाश, पृथ्वी एवं अग्नि) सब एक हो अग्नि समान तपने लगे हैं। ताल-तड़ाग के सूख जाने से हाथियों की दशा दयनीय हो गई है और वनराज भी इस गर्मी में शिथिल पड़ गये हैं। समस्त वातावरण गर्मी की तपन से बेचैनी का अनुभव करने लगा है। चलते पथिक भी इस ऋतु में आम के घने वृक्षों के नीचे विश्राम करने लगते हैं।

केसव न इस दोहे में यह भाव अंकित किया है कि इस ऋतु में बाहर जाना उचित नहीं है। नीचे साईस नायक के अश्व की लगाम थामे ऊपर की ओर मुख किये उसके आने की प्रतीक्षा कर रहा है। नायिका द्वारा नायक को ज्येष्ठ की इस भीष्ण गर्मी में रोकने का चित्रकार ने जो अंकन किया है, उसमें उसकी कल्पना की उड़ान का बोध स्वतः होने लगा है। रंग और रेखायें ही शब्दों को आकार में परिणित कर सकती हैं। झीने परिधान से झांकता नायिका का सौन्दर्य चटकीले रंगों से द्विगुणित करने में जोधपुर के चितेरे निपुण सिद्ध हुए हैं।

संदर्भ ग्रन्थ

1. हिन्दी कृष्ण भक्ति-काव्य पर पुराणों का प्रभाव – डॉ. शशि अग्रवाल, इलाहाबाद, 1960.
2. हिन्दी काव्य में बसंत वर्णन – डॉ. गोविन्द रजनीश, जयपुर, 1978
3. कांगड़ा पेन्टिंग्स आन लव – डॉ. एम.एस. रंधावा, नई दिल्ली, 1961
4. केशव और उनका साहित्य – डा. विजयपाल सिंह, दिल्ली, 1961
5. बारहमासा – श्री विनोद प्रकाश द्विवेदी, नई दिल्ली, 1980
6. क्रोनोलाजी आफ मेवाड़ पेन्टिग – डॉ. श्रीधर अन्धारे, नई दिल्ली, 1987
7. कृष्ण-काव्य में सौन्दर्य-बोध एवं रसानुभूति – डॉ. मीरा श्रीवास्तव, प्रयाग, 1976
8. ऋतुसंहार – कालीदास (हिन्दी अनुवाद) – श्री उमाकान्ति मिश्र, बनारस, 1958
9. दि वर्ल्ड आफ इंडियन मिनियेचर्स – श्रीमती जमीला वृजभूषन, न्यूयार्क, 1979
10. रसिकप्रिया – श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पटना, होली संवत्, 2015
11. अकबरी दरबार के हिन्दी कवि-डॉ. एस.पी. अग्रवाल, लखनऊ, वि.सं. 2007
12. पद्मावत – डॉ. वी. एस. अग्रवाल, चिरगांव, वि.सं. 2018
13. मालवा पेंटिग – डा. आनन्द कृष्ण, वाराणसी, 1963
14. इंडियन पेंटिग इन बून्दी एंड कोटा – श्री डब्ल्यू. जी आर्चर, लन्दन, 1959
15. राजपूत पेंटिग एट बून्दी एंड कोटा – माईलो बीच क्लीवलेण्ड, अस्कोना 1974
16. राग और रागिनी – ओ. सी. गान्गोली, बम्बई, 1948
17. हिन्दी काव्य में प्रकृति वर्णन – किरन कुमारी गुप्ता, प्रयाग, वि.सं. 2006
18. इंडियन मिनिएचर इन इलाहाबाद म्युजियम – डॉ. एस.सी. काला, इलाहाबाद, 1961
19. स्टडीज़ इन इंडियन पेन्टिंग – एन.सी. मेहता, बम्बई, 1926
20. मध्यकालीन हिन्दी और पंजाबी प्रेम काव्य – ओमप्रकाश, |1971
21. बोस्टन संग्रहालय की रागमाला पेन्टिग – डॉ. प्रतापदित्य पाल, बोस्टन, 1967
22. दि क्लासिक ट्रेडीसन इन राजपूत पेंटिंग – डॉ. प्रतापदित्यपाल, न्यूयार्क, 1978
23. बून्दी पेंटिंग – डॉ. प्रमोदचन्द्र, नई दिल्ली, 1959
24. इंडियन मिनियेचर पेंटिग – डॉ. प्रमोद चन्द्र, मेडीसन, 1971
25. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास – डॉ. रामकुमार वर्मा, इलाहाबाद, 1964
26. राजस्थानी चित्रकला – पद्मश्री रामगोपाल विजयवर्गी, जयपुर 1953
27. गोड्स, थीम्स एंड पीकाक्स – स्टूआर्ट केरीबेल्ज एंड माइलोबीच क्लीवलेण्ड, न्यूयार्क, 1965
28. इंडियन मिनियेचर्स पेंटिंग्स – राजकुमार टंण्डन, बंगलौर, 1982
29. राजपूताने का इतिहास, जेम्स टाड, लन्दन, 1914
30 दि ग्लोरी आफ इंडियन मिनियेचर्स, – डॉ. दलजीत, दिल्ली, 1988

लेखक परिचय

राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत, राष्ट्रपति भवन के संग्रहाध्यक्ष, चिन्तामणि व्यास का जन्म् बुन्देली वसुन्धरा में सागर के ग्राम खिमलासा में सन् 1933 में हुआ। उन्होंने कला-शिक्षा नई दिल्ली स्थित कालेज आफ आर्ट से प्राप्त कर हाल ऑफ नेशन बिल्डर्स, नेशनल गैलरी आफ पोर्टरेट्स, राष्ट्रीय नव कला संग्रहालय, नई दिल्ली तथा सालारजंग संग्रहालय, हैदराबाद में संग्रहाध्यक्ष रहने के पश्चात् अमेरिका तथा फ्रांस में आयोजित भारत महोत्सव के आयोजनों में संग्रहाध्यक्ष की भूमिका निष्ठापूर्वक निभाई। पिछले डेढ़ दशक में सांस्कृतिक आदान-प्रदान के अंतर्गत लेखक ने अनेक देशों में भारत का सफल प्रतिनिधित्व किया और वहां के अनेक प्रमुख संग्रहालयों में प्रदर्शित कला-भंडार से ज्ञान वृद्धि की। देश-विदेश में अपने तैल चित्रों की एकल प्रदर्शनियां आयोजित कर ख्याति अर्जित की। गत तीन दशकों से भारत की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में कला-लेखन कार्य में तल्लीन रहते हुए लेखक ने चित्रकार निकोलाई रोरिख, बोरिस गोर्गीव, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अमृता शेरगिल एवं राजस्थानी लघु-चित्र कला आदि पुस्तकों का लेखन किया। अब महाकवि केशव द्वारा रचित **रसिकप्रिया** पर चित्रित विविध शैलियों के चित्रों का समीक्षात्मक यह शोध, पुस्तक के रूप में प्रस्तुत है।

जिन न निहारे ते निहोरत निहारिबे कौं।
काहू न निहारे जिन कैसें हूँ निहारे हैं।
सुरनर नाग नवकन्यानि के प्रानपति,
पतिदेवतानि हूँ कि हियनि बिहारे हैं।
इहि बिधि केसौदास रावरे असेष अंग,
उपमा न उपजी बिरंचि पचि हारे हैं।
रूप-मद-मोचन मदन-मद-मोचन हैं।
तीय-ब्रत-मोचन बिलोचन तिहारे हैं।

"केशवदास"